आई एस एस एन : 0972-169X
पंजीयन क्रमांक 70269/98 के अंतर्गत भारत सरकार के समाचार पत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा पंजीकृत
डाक पंजीयन क्रमांक : डी एल–एस डब्ल्यू–1/4082/2006

विज्ञान प्रसार की मासिक पत्रिका

ड्रीम 2047

अक्टूबर 2006 | खण्ड 9 | अंक 1 | मूल्य रुपए : 5.00

इस अंक में

संपादकीय पृष्ठ 2
पॉल एरडोस पृष्ठ 3

गॉर्डन मूर, उनका नियम और एकीकृत परिपथ पृष्ठ 6
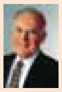
3-डी दृश्य और होलोग्राफी का अद्भुत संसार पृष्ठ 11

सही खान-पान पृष्ठ 15

भूकंप टिप - 5 पृष्ठ 17

नोबेल पुरस्कार 2006 पृष्ठ 19
आकाश दर्शन - अक्टूबर 2006 पृष्ठ 20

विज्ञान प्रसार समाचार

कैम्ब्रिज स्कूल, नोएडा (उ.प्र.) में खगोलीय गतिविधि कार्यशाला

नोएडा (उ.प्र.) के विभिन्न स्कूलों से चुने हुए शिक्षकों के लिए सैक्टर-27 नोएडा स्थित कैम्ब्रिज स्कूल में 28 अगस्त से 1 सितंबर 2006 तक एक खगोलीय गतिविधि कार्यशाला का आयोजन किया गया। इस आयोजन का उद्देश्य स्कूल जाने वाले बच्चों में खगोल विज्ञान के प्रति जागरूकता पैदा करना और उनमें इस विषय के प्रति रुचि जगाना था। कार्यशाला में 30 प्रतिभागियों ने भाग लिया। स्कूली छात्र भी इसमें बड़ी संख्या में शामिल हुए। कार्यशाला के दौरान प्रतिभागियों ने 30 सरल 39-एमएम रिफ्रैक्टर टेलिस्कोप बनाए जिन्हें कार्यशाला में भाग लेने वाले स्कूलों को भेंट स्वरूप दे दिया गया ताकि वे अपने-अपने खगोलीय क्लब के माध्यम से नियमित रूप में खगोलीय गतिविधियों का आयोजन तथा आकाश दर्शन कर सकें। इस अवसर पर आइंस्टाइन के कार्य, शुक्र पारगमन, प्रो. पी.सी. वैद्य तथा प्रो. ए.के. रायचौधरी पर वृत्तचित्रों का प्रदर्शन किया गया। 30 अगस्त को प्रतिभागियों ने विज्ञान प्रसार की खगोल विज्ञान प्रयोगशाला का भ्रमण किया और विज्ञान प्रसार के 11 इंच सेलेस्ट्रान सीजीई स्मिट-कैसग्रेन टेलिस्कोप से रात्रि आकाश का अवलोकन किया। इस कार्यशाला का संचालन विज्ञान प्रसार के वैज्ञानिक अरविंद सी. रानडे, डॉ. टी.वी. वैंकटेश्वरन तथा कपिल त्रिपाठी और प्रसिद्ध विज्ञान लेखक बिमान बसु ने किया।

श्री कपिल त्रिपाठी, वैज्ञानिक, विज्ञान प्रसार प्रतिभागियों के साथ खगोलीय गतिविधि किट का प्रदर्शन करते हुए

त्रिची (तमिलनाडु) में अभिप्रेरण तथा प्रशिक्षण कार्यशाला

विज्ञान प्रसार तथा तमिलनाडु साइंस एंड टैक्नोलॉजी सेंटर, चैन्नई ने संयुक्त रूप से एक अभिप्रेरण तथा प्रशिक्षण कार्यशाला का आयोजन किया। यह कार्यशाला शिक्षकों के लिए अन्ना साइंस सेंटर-प्लेनेटेरियम, तिरुचिरापल्ली में आयोजित की गई। तिमलनाडु में विज्ञान प्रसार द्वारा आयोजित यह इस श्रृंखला की दूसरी कार्यशाला थी जिसका उद्देश्य स्कूल शिक्षकों तथा विज्ञान संचारकों को अपने-अपने क्षेत्र में विज्ञान क्लबों का गठन करने के लिए प्रेरित करना था। मार्च 2006 में चैन्नई में इसी प्रकार की एक और कार्यशाला का आयोजन किया गया था जिससे प्रेरित होकर चैन्नई तथा उसके आसपास 75 साइंस क्लबों का गठन किया जा चुका है। तिरुचिरापल्ली में आयोजित अभिप्रेरण कार्यक्रम में 30 स्कूलों के लगभग 60 शिक्षकों ने भाग लिया। इस कार्यक्रम का उद्घाटन तिरुचिरापल्ली के मुख्य शिक्षा अधिकारी डॉ. आर. भास्कर सेथुपथी ने किया। अन्ना साइंस सेंटर-प्लेनेटेरियम तिरुचिरापल्ली के परियोजना अधिकारियों के अतिरिक्त तमिलनाडु साइंस फोरम से संसाधन व्यक्तियों को आमंत्रित किया गया। कार्यशाला के दौरान प्रतिभागियों को साइंस क्लबों का गठन करने तथा उनके लिए गतिविधियां विकसित करने का प्रशिक्षण दिया गया।

शेष पृष्ठ 14 पर जारी

...वैज्ञानिक ढंग से सोचें, वैज्ञानिक ढंग से करें ... वैज्ञानिक ढंग से सोचें, वैज्ञानिक ढंग से करें ... वैज्ञानिक ढंग से सोचें, वैज्ञानिक...

विज्ञान प्रसार के लिए डॉ. सुबोध महंती द्वारा सी–24, कुतुब इंस्टीट्यूशनल एरिया, नई दिल्ली 110 016 से प्रकाशित तथा उन्हीं की ओर से एस. नारायण एंड संस, बी–88, ओखला इंडस्ट्रीयल एरिया फेस – 2, नई दिल्ली 110 020 द्वारा मुद्रित
सम्पादक : डॉ. विनय बी. काम्बले

मच्छरो भाग जाओ!

हर साल मानसून जाते-जाते मच्छरों की आफत दे जाता है जो मलेरिया, डेंगू तथा चिकनगुनिया फैलाते हैं। इन रोगों की मार से कई लोग मौत के घाट उतर जाते हैं और हजारों लोगों में ये बीमारियां फैल जाती है। साल-दर-साल बीमारी पैदा करने वाले यह सूक्ष्म जीव उत्परिवर्तन की बदौलत और भी अधिक घातक हो जाते हैं तथा मृतकों व मरीजों की संख्या बढ़ती रहती है। मलेरिया का प्रकोप सदियों से हो रहा है लेकिन डेंगू और चिकनगुनिया इसकी तुलना में नई बीमारियां हैं। मलेरिया का प्रकोप *प्लाज़्मोडियम* वंश के एक प्रोटोजोआ परजीवी के कारण होता है। यह परजीवी मादा *एनोफेलीज़* मच्छर के शरीर में विकसित होता है और इनके काटने पर स्वस्थ व्यक्ति में फैल जाता है। इसलिए *एनोफेलीज़* मच्छर को मलेरिया का रोग वाहक कीट कहा जाता है। डेंगू निकट रूप से संबंधित चार विषाणुओं (डीईएन-1,2,3 तथा 4) में से किसी से भी हो सकता है लेकिन चिकनगुनिया केवल चिकनगुनिया विषाणु से होता है। रोगी व्यक्ति के शरीर से डेंगू तथा चिकनगुनिया दोनों बीमारियों के विषाणु मादा *एडीज एजिप्टी* मच्छर के काटने पर अन्य लोगों में फैलते हैं। इस तरह *एडीज एजिप्टी* मच्छर डेंगू तथा चिकनगुनिया दोनों के विषाणुओं का वाहक है। इस वर्ष मानसून लौटने के तुरंत बाद से अक्टूबर के द्वितीय सप्ताह तक देश भर में करीब 6,423 व्यक्ति डेंगू से संक्रमित हो चुके हैं जिनमें से 107 रोगियों की मृत्यु हो चुकी है। अकेले दिल्ली में ही इस रोग के कारण 1,731 से अधिक लोग संक्रमित हो चुके हैं जिनमें से 31 रोगियों की मृत्यु हो चुकी है। संभवतः 13.5 लाख से अधिक लोग चिकनगुनिया से संक्रमित हो चुके हैं लेकिन इनमें से 1,651 मरीज़ों की ही पुष्टि हो पायी है। डेंगू और चिकनगुनिया बीमारी का सबसे अधिक प्रकोप केरल में हुआ है। अकेले केरल में ही चिकनगुनिया के लगभग 60,000 रोगियों का इलाज चल रहा है और माना जाता है कि इस विषाणु ने लगभग 80 लोगों की जान ले ली है।

डेंगू (जिसे डेंगू बुखार भी कहा जाता है) की महामारी का पता सबसे पहले 1779-1780 में एशिया, अफ्रीका तथा उत्तरी अमेरिका में लगा। 'डेंगू' स्वाहिली भाषा के 'डिंगा' शब्द से बना है जिसका अर्थ है आकस्मिक ऐंठन के समान झटका। क्यूबा में 1827 में इसका प्रकोप हुआ तो गलती से इसका नाम स्पेनिश शब्द डेंगू लोकप्रिय हो गया जिसका अर्थ है तुनकमिज़ाज। डेंगू के विषाणु तथा उन्हें फैलाने वाले मच्छर 200 वर्ष से भी अधिक समय तक विश्व के उष्ण-कटिबंधी क्षेत्रों में मौजूद रहे हैं। डेंगू के बुखार को हल्का माना जाता था। ऐसा भी माना जाता था कि डेंगू घातक नहीं है। इसकी भयंकर महामारी का प्रकोप 10-40 वर्ष के लंबे अंतराल पर हुआ करता था। दक्षिण पूर्व एशिया में दूसरे विश्व युद्ध के बाद डेंगू की महामारी फैली और उसके बाद से ही यह विश्व भर में फैल गई है। दक्षिण पूर्व एशिया में 1950 में फिलीपीन में पहली बार डेंगू का एक और भी अधिक गंभीर रूप अर्थात् डेंगूजनित रक्तस्रावी ज्वर (डेंगू हेमोरेजिक फीवर) या 'डीएचएफ' फैला। तब से यह रोग दक्षिण पूर्व एशिया के अनेक देशों में फैल चुका है और इस क्षेत्र में भारत सहित अनेक देशों में तो यह स्थानीय रोग बन चुका है। विश्व भर में रोगों की उपस्थिति के हिसाब से देखें तो मलेरिया के बाद डेंगू का ही दूसरा स्थान है। भारत में यद्यपि डेंगू का प्रकोप बहुत पहले से होता रहा है। रक्तस्रावी डेंगू ज्वर के प्रकोप का पता भारत में सबसे पहले 1963 में कोलकाता में लगा। उसके बाद 1996, 2003 और 2005 में भी भारत में डेंगू का भयानक प्रकोप हुआ।

इस साल हम डेंगू के महा प्रकोप का सामना एक बार फिर कर रहे हैं। आम प्रकार के डेंगू ज्वर के लक्षण हैं : तेज ज्वर, पीड़ा, जोड़ों का दर्द, उल्टियां और शरीर पर पित्तियां उभरना। साधारण डेंगू ज्वर के मरीज़ों की जान जाने का खतरा नहीं रहता लेकिन उनमें से कुछ मरीज रक्तस्रावी डेंगू ज्वर या डेंगू शॉक सिंड्रोम (डीएसएस) से पीड़ित हो सकते है।। कुछ मरीजों की मृत्यु भी हो सकती है। रक्त में पट्टिकाणुओं (प्लेटलेट) की संख्या में कमी, शारीरिक छिद्रों से रक्त स्राव, पेट दर्द तथा न्यून रक्त दाब इस अवस्था के मुख्य लक्षण हैं लेकिन समय रहते समुचित इलाज करने पर रोग पर काबू पाया जा सकता है। इस रोग में रक्त स्राव क्यों होता है? इसलिए कि रोग के संक्रमण से रक्तवाहिकाओं को हल्का या भारी नुकसान पहुंचता है जिसके कारण रक्त/प्लाज़्मा का स्रवण होकर विभिन्न अंगों में पहुंच जाता है। इतना ही नहीं इससे रक्त वाहिकाएं बुरी तरह क्षतिग्रस्त हो सकती हैं जिसके कारण रक्तस्राव होने लगता है। रक्त का थक्का जमाने वाले अवयवों की क्रियाशीलता में गड़बड़ी से रक्त स्रावी डेंगू ज्वर तथा डेंगू शॉक सिंड्रोम के लक्षणों का सीधा संबंध है। रक्त वाहिकाओं की क्षति तथा पट्टिकाणुओं की संख्या घटने के कारण रक्त का थक्का ठीक तरह से नहीं जम पाता। इस रोग का पता लगाना थोड़ा कठिन है क्योंकि जो प्रतिरक्षी (ऐंटिबाडी) पैदा होती हैं, सीरम संबंधी परीक्षणों में उनका पता चार दिन बाद तक ही लग पाता है। फिर भी, समुचित उपचार से रक्तस्रावी डेंगू ज्वर तथा डेंगू शॉक सिंड्रोम के रोगियों को आराम मिल सकता है। अधिकांश विषाणु रोगों की तरह डेंगू ज्वर का भी कोई निश्चित इलाज का तरीका नहीं है। एंटिबायोटिक दवाईयों से भी फायदा नहीं होता। पैरासेटामॉल से बुखार तथा जोड़ों के दर्द को कम किया जा सकता है। एस्पिरिन तथा ब्रुफेन जैसी दवाईयां लेना खतरनाक है क्योंकि इनसे रक्तस्राव का खतरा बढ़ सकता है।

चिकनगुनिया का पता सबसे पहले 1953 में तंज़ानिया में लगा। उसके फौरन बाद थाइलैंड, कंबोडिया, वियतनाम, भारत, म्यांमार और श्रीलंका में इसकी महामारी फैली। 'चिकनगुनिया' नाम अफ्रीका के पूर्व तटीय भाग में दक्षिणी तंज़ानिया तथा उत्तरी मोजांबीक की माकोंडे भाषा के 'चिकनगुंडे' शब्द से बना है जिसका अर्थ है "ऐंठा हुआ"। चिकनगुनिया के मरीजों में जोड़ों के गंभीर दर्द के कारण उनका शरीर ऊपर को ऐंठा या झुका हुआ दिखाई देता है और यही रोग का मुख्य लक्षण है। चिकनगुनिया का प्रकोप मुख्य रूप से अफ्रीका, भारत तथा दक्षिण-पूर्व एशिया में होता है। सन् 2003 के बाद फिलीपीन तथा हिंद महासागर के द्वीपों में स्थित कई राष्ट्रों में भी इस रोग का प्रकोप हुआ है। कुछ यूरीपीय देशों में भी चिकनगुनिया की घटनाओं का पता लगा है। भारत में 1963 में पश्चिम बंगाल, तमिलनाडु तथा आंध्र प्रदेश में और 1973 में महाराष्ट्र में चिकनगुनिया का ज्वर फैला। हालांकि सन् 1983 तथा सन् 2000 में विशेष रूप से महाराष्ट्र में चिकनगुनिया के प्रकोप का पता लगा लेकिन कई दशकों के बाद इस बार यह रोग भारत में बड़े पैमाने पर फैला है।

चिकनगुनिया का ज्वर डेंगू के ही समान होता है। इसमें जोड़ों में तेज दर्द होता है जो कभी-कभी लगातार होता है, बुखार आता है और शरीर पर पित्तियां

शेष पृष्ठ 10 पर जारी

सम्पादक : विनय बी. काम्बले
पत्र व्यवहार के लिए पता : विज्ञान प्रसार सी–24 कुतुब इंस्टीट्यूशनल एरिया, नई दिल्ली–110016
दूरभाष : 26864157, फैक्स : 0120–2404437
ई–मेल : info@vigyanprasar.gov.in
वेबसाइट : http://www.vigyanprasar.com

"ड्रीम 2047" में प्रकाशित लेखों/प्रलेखों में व्यक्त लेखकों के कथनों, मतों व सुझावों के लिए विज्ञान प्रसार किसी भी रूप मे उत्तरदायी नहीं है।

"ड्रीम 2047" मे प्रकाशित लेखों के अंश, सौजन्य/साभार के साथ पुनर्प्रकाशित/उद्धृत किये जा सकते हैं। बशर्ते कि वे पत्र-पत्रिकाएं नि:शुल्क वितरित की जा रही हों जिनमें पुनर्प्रकाशन किया जा रहा हो।

पॉल एरडोस

जिसे केवल संख्याओं से प्रेम था

❑ सुबोध महंती
ई-मेल : mahantisubodh@yahoo.com

"समस्याएं (गणितीय) सदैव ही मेरे गणितीय जीवन का अभिन्न अंग रही हैं। एक सही ढंग से चयनित गणितीय समस्या किसी क्षेत्र विशेष में आने वाली कठिनाई को अलग कर एक सूचक का काम कर सकती है, जिससे उस क्षेत्र में होने वाली संगति को आंका जा सकता है। एक साधारण-सी दिखने वाली समस्या अकसर अपने वास्तविक स्वभाव कोई संकेत नहीं देती। इससे मिठाई की तरह क्षणिक सुख मिल सकता है अथवा यह एक सूक्ष्म बीज की तरह भी हो सकती है जो गहरे और सूक्ष्म ज्ञान की नमी पाकर एक विशाल वृक्ष में विकसित हो सकता है।"

- पॉल एरडोस

"इस शताब्दी में जहाँ गणित सिद्धान्तवादियों से अत्यधिक प्रभावित है, वह गणितीय समस्याओं को हल करने वालों के राजकुमार तथा गणितीय समस्याओं को प्रस्तुत करने वाले निर्विवाद राजा रहे हैं। कई मायनों में वह हमारे समय के अयलर हैं। जिस प्रकार अयलर द्वारा हल की गयी विशेष समस्याओं ने विश्लेषक और बीजीय संख्या सिद्धान्त, संस्थिति-विज्ञान, संचयविन्यास तथा फलन समष्टि आदि की ओर मार्गदर्शन किया, ठीक उसी प्रकार एरडोस द्वारा किये गये कार्य की विधियां तथा उसके परिणाम हमें महत्वपूर्ण नये विषयों जैसे कि संचय विन्यास एवं प्रायिक संख्या सिद्धान्त, संचयविन्यास रेखागणित, प्रायिक एवं परिमितातीत संचयविन्यास, ग्राफ सिद्धान्त तथा अनेक ऐसे विषय जिनकी उनके विचारों से उत्पत्ति होनी है, की रूपरेखा प्रस्तुत करते हैं।

- अर्नस्ट स्ट्रॉस, जिन्होंने अल्बर्ट आइंस्टाइन तथा पॉल एरडोस दोनों के साथ कार्य किया

पॉल एरडोस बहुत से कारणों से अपने जीवन में एक किंवदन्ती बन गए थे। एरडोस बीसवीं शताब्दी के एक बहुमुखी प्रतिभा के धनी गणितज्ञ थे। वह गणितीय समस्याओं को हल करने वाले विशुद्ध गणितज्ञ थे। जैसा कि ऊपर कहा गया है कि गणितीय समस्याएं उनके जीवन का एक अभिन्न अंग थीं। उन्होंने अपने पूरे जीवन काल में अत्यधिक कठिन तथा असाधारण गणितीय समस्याएं प्रस्तुत कीं तथा उनको हल किया। एरडोस के लिये किसी गणितीय प्रश्न का हल केवल गणितीय गणनाओं का एक जटिल क्रम मात्र नहीं था। उनके विचार में किसी गणितीय प्रश्न के हल से इस बात की सूक्ष्म जानकारी मिलनी चाहिये कि अन्तिम परिणाम सही क्यों है। एरडोस गणितीय प्रतिभा के अप्रतिम प्रतीक थे। वह गणितीय समस्याओं को प्रस्तुत करने वालों के राजकुमार कहलाये। उन्होंने बहुत से गणितज्ञों को कठिन गणितीय प्रश्न हल करने के लिये प्रेरित किया। उनका विचार था कि "गणितीय सत्य खोजे जाते हैं उनका आविष्कार नहीं होता।" एरडोस को अकसर अपने समय का अयलर (18 वीं शताब्दी के महान जर्मन गणितज्ञ लियोनार्ड अयलर के प्रति ध्यान आकर्षित करते हुए) कहा जाता है। उन्होंने अपना जीवन गणित के प्रति इस प्रकार समर्पित किया जिसका कोई दूसरा उदाहरण नहीं है। वह गणित के अतिरिक्त कुछ और नहीं सोचते थे। यद्यपि उन्होंने गणित के कई क्षेत्रों में कार्य किया लेकिन संख्या सिद्धान्त में उनकी विशेष योग्यता थी। उनके 1500 से भी अधिक शोध पत्र प्रकाशित हुए। 70 वर्ष की आयु में भी वह हर सप्ताह एक शोध पत्र प्रकाशित किया करते थे। वह अपने एक सहकर्मी के विचारों का उल्लेख करते हुए कहते थे कि "गणितज्ञ ऐसी युक्ति होती है जो कॉफी को गणितीय सिद्धान्त (प्रमेय) में बदल देती है।" उन्होंने अपना जीवन प्रतिदिन 20 घंटे तक गणितीय समस्याओं पर कार्य करते हुए व्यतीत किया। वह अकसर अपने सहकर्मियों के साथ कार्य किया करते थे।

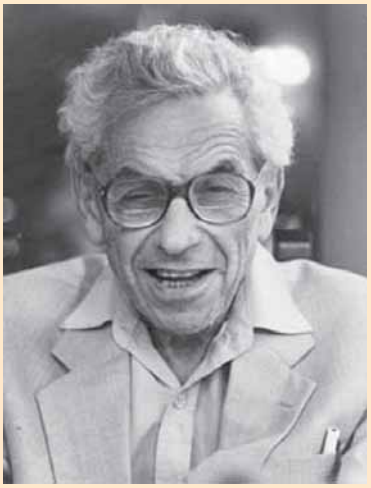

पॉल एरडोस

एरडोस का संख्या सिद्धान्त के सम्बन्ध में पहला महत्वपूर्ण योगदान इस प्रमेय को सिद्ध करना था कि "1 से अधिक प्रत्येक संख्या तथा उस संख्या के दोगुने के बीच कम से कम एक पूर्ण अविभाज्य संख्या अवश्य होती है।" जब उन्होंने यह प्रमेय सिद्ध की तो उनकी आयु केवल 21 वर्ष थी। यह प्रमेय जो कि सन् 1845 में बर्नार्ड द्वारा प्रस्तुत की गयी, पहले भी एक रूसी गणितज्ञ *चेबिशेव* द्वारा सन् 1850 में सिद्ध की गयी थी परन्तु एरडोस द्वारा दिया गया हल अधिक सुरूचिपूर्ण तथा प्रारम्भिक था। उनकी महानतम उपलब्धि यह थी कि उन्होंने पूर्ण अविभाज्य संख्याओं के सिद्धान्त का अधिक सुरूचिपूर्ण तथा प्रारम्भिक हल प्रस्तुत किया। इस सिद्धान्त द्वारा सन् 1896 से पूर्ण अविभाज्य संख्याओं के पैटर्न की व्याख्या की जाती रही थी। यह कार्य उनके द्वारा सन् 1949 में किया गया। यह कार्य उसी वर्ष स्वतन्त्र रूप से ए. सेलबर्ग द्वारा भी किया गया। पूर्ण अविभाज्य संख्या सिद्धान्त का विचार 18 वीं शताब्दी में रखा गया था। यह पहले भी सन् 1896 में *हेडमार्ड* तथा *डी ल वैली पाउसिन* द्वारा स्वतन्त्र रूप से जटिल विश्लेषण द्वारा सिद्ध किया गया था।

एरडोस का कोई एक स्थाई निवास नहीं था। उन्हें सांसारिक सफलताओं तथा व्यक्तिगत आराम की चिन्ता नहीं थी। उनके लिये हर प्रकार की सम्पत्ति एक उलझन थी। उन्होंने एक बार कहा था " मैंने कभी भौतिक वस्तुओं के अधिकार की इच्छा नहीं की। एक पुरानी यूनानी कहावत के अनुसार विद्वान व्यक्ति के पास ऐसा कुछ भी नहीं होता जो वह अपने हाथ में लेकर न चल सके। यदि आपके पास कुछ सुन्दर है तो आपको उसकी देखभाल करनी पड़ेगी, इसलिये मैं उसे किसी को देना पसन्द करूंगा। मैं हमेशा कहता हूँ कि, व्यक्तिगत सम्पत्ति एक उलझन है।" वह व्याख्यानों से होने वाली आय तथा पुरस्कारों को कभी अपने पास नहीं रखते थे। वह अपनी आय प्रायः उन व्यक्तियों को पुरस्कार देने में खर्च कर देते थे जो उनके द्वारा प्रस्तुत जटिल समस्याओं को हल करते थे। उनके द्वारा निर्धारित

पुरस्कारों की राशि 25 डॉलर (उन प्रश्नों के लिए जिनको वे कठिन नहीं समझते थे) से लेकर 10,000 डॉलर (संख्या सिद्धान्त के एक प्रश्न के लिये जिसको वे अत्यधिक कठिन समझते थे) तक थी। उन्होंने अधिकतम 1,000 अमेरिकी डॉलर की राशि पुरूस्कार स्वरूप वितरित की। उन्होंने छात्रों को दान भी दिया। कभी-कभी वह अपनी आय पुण्यार्थ भी दान किया करते थे। सन् 1983 में उन्होंने गणितज्ञों का सबसे बड़ा पुरस्कार "वुल्फ पुरस्कार" जीता जिसकी पुरस्कार राशि 50,000 अमरीकी डॉलर थी। उन्होंने इसमें से अपने लिए केवल 750 डॉलर रखे, शेष राशि दूसरों को दे दी। उन्होंने 30,000 डॉलर एक विश्वविद्यालय के गणित विभाग को अपनी माँ के नाम से एक स्मृति कोष की स्थापना के लिए दिये। बाकी बची पुरस्कार राशि में से अधिकतर धन उन्होंने विभिन्न कारणों से अपने रिश्तेदारों को दे दी। वे एक बहुत ही सादा जीवन व्यतीत करते थे तथा उन्हें अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये बहुत कम धन की आवश्यकता पड़ती थी। उन्होंने विवाह नहीं किया था। एरडोस किसी ऐसे सम्बन्ध में कम विश्वास करते थे जिसका आधार बौद्धिक उत्सुकता न हो।

एरडोस ने कोई स्थाई नौकरी स्वीकार नहीं की क्योंकि वह यह मानते थे कि स्थाई नौकरी गणितीय प्रश्नों पर ध्यान केन्द्रित करने तथा दूर देशों के गणितज्ञों के साथ काम करने में बाधा होगी। विशुद्ध गणित के क्षेत्र में कार्य करने के लिए उन्हें किसी यंत्र, प्रयोगशाला अथवा पुस्तकालय की आवश्यकता नहीं थी। वे या तो अपने मित्रों के साथ रहते थे या अधिवेशनों में भाग लेते रहते थे। वह अधिकांशतः एक सूटकेस पर निर्भर रहते थे तथा गणित के एक संस्थान से दूसरे केन्द्र तक की यात्रा करते रहते थे। जब उनका देहांत हुआ तो वह वारसा में एक अधिवेशन में भाग ले रहे थे। वे बहुत अधिक यात्राएं करते थे। उनके मित्रों तथा सहकर्मियों में यह बात प्रचलित थी कि "यदि आपको एरडोस से मिलना है तो आप जहाँ हैं वहीं रुक कर प्रतीक्षा करें, वह जल्दी ही वहाँ पहुँचेंगे।" उन्होंने हंगरी की अकादमी के गणित संस्थान से इस शर्त पर अनुबंध किया था कि वे अपना वेतन तब लेंगे जब वे हंगरी में होंगे। इसी प्रकार वे बहुत से स्थानों से जुड़े थे। उनका गुजारा प्रायः व्याख्यान के शुल्क, पुरस्कार तथा साथ काम करने वालों के अतिथि सत्कार से चलता था।

पॉल एरडोस का जन्म 26 मार्च 1913 को हंगरी के बुडापेस्ट में हुआ। उनके माता-पिता लाजोस तथा एन्ना एरडोस गणित के अध्यापक थे। वे यहूदी मूल के थे परन्तु यहूदी धर्म को नहीं मानते थे। वह अपने माता-पिता की तीन संतानों में से एक थे। ऐसा माना जाता है कि उनकी दोनों बहनें एरडोस से भी अधिक बुद्धिमान थीं जिनकी मृत्यु स्कार्लेट ज्वर के कारण कम आयु में ही हो गयी थी। एरडोस स्वयं भी एक विलक्षण बालक थे। तीन वर्ष की आयु में वह तीन अंकों वाली संख्याओं को गुणा किए बिना लिख दिया करते थे। उन्होंने तीन वर्ष की आयु में स्वयं ही ऋणात्मक संख्याओं की खोज की और 100 अंश में से 250 अंश को घटाया तथा उत्तर में शून्य से 150 अंश नीचे की संख्या प्राप्त हुई। एरडोस के माता-पिता उनका बहुत ध्यान रखते थे क्योंकि उनकी दो बेटियों की मृत्यु हो चुकी थी तथा एरडोस उनकी एक मात्र जीवित संतान थे। किसी ने एक बार कहा था कि "21 वर्ष की आयु तक एरडोस ने कभी अपने टोस्ट पर मक्खन भी नहीं लगाया था।" उनको कुछ वर्षों के बाद ही स्कूल से हटा लिया गया। उनके माता-पिता तथा एक जर्मन अध्यापिका ने उन्हें घर पर ही शिक्षा दी।

लेयोनार्ड अयलर

एरडोस ने पासमानी पीटर विश्वविद्यालय, बुडापेस्ट से सन् 1934 में पी-एच. डी. की उपाधि प्राप्त की। डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त करने के बाद वे पोस्ट डॉक्टोरल फैलो के रूप में मैनचेस्टर गये जहाँ वे 4 वर्ष तक रहे। अपने मैनचेस्टर प्रवास के दौरान वे साल में कम से कम 3 बार बुडापेस्ट आते थे। लेकिन, जर्मनी में हिटलर के उदय के बाद से हंगरी यहूदियों के लिए सुरक्षित नहीं रह गया था। इसलिए वे कार्य करने के लिए प्रिंसटन चले गये। उनकी प्रारम्भिक फैलोशिप एक वर्ष के लिए थी जिसकी अवधि को आगे नहीं बढ़ाया गया क्योंकि एरडोस प्रिंस्टन के मापदण्डों पर खरे नहीं उतरते थे। प्रिंसटन के अधिकारियों को वे अशिष्ट तथा गैर पारम्परिक लगते थे।

सन् 1943 में उन्होंने परड्यू विश्वविद्यालय में अंशकालिक नौकरी स्वीकार की। युद्ध के समय वे अपने परिवार तथा मित्रों से पूरी तरह कट गये थे। अगस्त 1945 में उन्हें अपने परिवार की सूचना मिली। उनके पिता का सन् 1942 में दिल के दौरे से देहान्त हो गया था। उनके 4 रिश्तेदारों की हत्या कर दी गयी थी। उनकी माँ और रिश्ते का एक भाई किसी प्रकार जिन्दा बच गये थे। अंततः वह सन् 1948 के अंत में अपने परिवार के बचे हुए सदस्यों तथा मित्रों से मिलने के लिए हंगरी वापस आ सके। सन् 1952 में नॉत्रदाम विश्वविद्यालय में एक अस्थाई नौकरी स्वीकार करने से पूर्व उन्होंने अनेक बार इंग्लैण्ड तथा अमेरिका के बीच यात्राएं कीं। उनकी सेवा की शर्तें काफी आसान थीं। वह संयुक्त शोध करने के लिए विश्व में कहीं भी जाने को स्वतंत्र थे। इन्हीं आसान सेवा शर्तों पर उन्हें स्थाई नौकरी भी मिल सकती थी लेकिन वे स्वयं ऐसा नहीं चाहते थे।

सन् 1951 में एरडोस ने संख्या सिद्धांत के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान के लिए अमेरिकी गणित सोसाईटी द्वारा दिया जाने वाला कोल पुरस्कार जीता।

सन् 1955 में अतिथि प्राध्यापक के स्थायी पद हेतु आवेदन करते समय एरडोस ने अपना विवरण इस प्रकार दिया था "मैं, पॉल एरडोस, 16 मार्च 1913 को पैदा हुआ था। मैंने बुडापेस्ट विश्वविद्यालय से शिक्षा प्राप्त की, मैंने अपनी पी-एच. डी. की उपाधि सन् 1934 में बुडापेस्ट विश्वविद्यालय से प्राप्त की। सन् 1934 से सन् 1938 तक मैं मैनचेस्टर विश्वविद्यालय में शोध फैलो रहा, 1939 में मैंने मैनचेस्टर में डी.एस-सी. की उपाधि (अनुपस्थिति में) प्राप्त की। सन् 1938 से सन् 1948 तक मैं विभिन्न अमेरिकी विश्वविद्यालयों में रहा जिनमें इंस्टीट्यूट फॉर एडवांस स्टडीज, पेन्सिलवेनिया विश्वविद्यालय, परड्यू विश्वविद्यालय, मिशिगन विश्वविद्यालय, स्टैनफोर्ड विश्वविद्यालय तथा साइराक्यूज़ विश्वविद्यालय शामिल हैं। सन् 1948-49 में मैंने हॉलैण्ड, इंग्लैण्ड तथा हंगरी में विभिन्न विश्वविद्यालयों में व्याख्यान दिये। सन् 1949-50 में मैंने विभिन्न अमेरिकी विश्वविद्यालयों में व्याख्यान दिये, सन् 1950-51 में मैं स्कॉटलैण्ड में एबर्डीन वि वविद्यालय में था तथा सन् 1951-52 में मैं लंदन के यूनिवर्सिटी कॉलेज में था। सन् 1952-53 में मैं वाशिंगटन में अमेरिकन विश्वविद्यालय में था तथा मानक ब्यूरो और लॉस एन्जेलिस में इंस्टीट्यूट ऑफ न्यूमेरिकल एनालिसिस से जुड़ा था। सन् 1953-54 में मैं नात्रदाम विश्वविद्यालय में अतिथि प्राध्यापक था। मुझे उस वर्ष वहाँ अतिथि प्राध्यापक के रूप में जाना था परंतु कुछ अपरिहार्य कारणों से मेरी वहाँ वापसी नहीं हो सकी। सन् 1955-56 में मुझे अमेरिकन मेथेमेटिकल सोसाईटी में अतिथि व्याख्याता के रूप में जाना है, परन्तु यह अभी निश्चित नहीं

है कि मैं यह कार्य कर सकूंगा या नहीं।'' यह पक्तियां उन्होंने हाथ से लिखी थीं तथा इनमें कुछ व्याकरण की अशुद्धियां भी थीं।

सन् 1954 में वह एक अधिवेशन में एम्सटर्डम गये परन्तु वहाँ से वापसी के समय उन्हें कम्युनिज्म पर उनके विचारों के कारण अधिकारियों की पूछताछ का सामना करना पड़ा। जब उनसे यह पूछा गया कि मार्क्स के बारे में उनकी क्या राय है तो उनका उत्तर था ''मुझमें यह निर्णय करने की योग्यता नहीं लेकिन वह निःसंदेह एक महान व्यक्ति थे।'' उनको दोबारा प्रवेश का वीजा देने से मना कर दिया गया। केवल पूछताछ के आधार पर ही उन्हें दोबारा वीजा देने से मना नहीं किया गया था। अमेरिकी सरकार द्वारा एरडोस को दोबारा प्रवेश का वीजा नहीं दिये जाने के और भी कई कारण बताये जाते हैं। उन्होंने अमेरिका में रहने वाले एक चीनी गणितज्ञ से पत्राचार किया, जो बाद में चीन चला गया था। 1941 में एरडोस बिना कुछ किये ही एफ.बी.आई. की नजर में आ गये। एरडोस तथा दो साथी गणितज्ञ लाँग आइलैण्ड में एक सैनिक रेडियो ट्रांसमीटर के पास पुलिस द्वारा पकड़ लिये गये। वे वहाँ इस लिये पहुँच गये थे क्योंकि वे गणित पर अपनी बहस में इतने खोए हुए थे कि ''प्रवेश निषेध'' का संकेत नहीं देख पाये।

श्रीनिवास रामानुजन

अमेरिकी सरकार द्वारा वीजा देने से मना कर दिये जाने के बाद अगले दस वर्षों तक वे अधिकतर इजराइल में रहे। 1960 के प्रारम्भ में उन्होंने अनेक बार अमेरिकी अधिकारियों से दोबारा प्रवेश का वीजा दिये जाने की प्रार्थना की और अन्ततः उन्हें अमेरिका वापस आने की अनुमति मिल गई।

एरडोस ने लगभग 500 गणितज्ञों के साथ काम किया। एरडोस के समय में उनके साथ काम करना सम्मान की बात समझी जाती थी। इस सम्मान को व्यक्त करने के लिये कैस्पर गोफमैन ने 1965 में ''एरडोस नम्बर'' नामक एक सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। जोज़ेफ पेलिकन लिखते हैं, ''एरडोस ने सर्वकालिक समस्त गणितज्ञों की तुलना में सर्वाधिक सह-लेखकों के साथ काम किया। उनके साथ काम करने वाले सह-लेखकों की संख्या 500 के लगभग है। यह कोई संयोग नहीं है कि विश्व के गणितज्ञों ने ''एरडोस नम्बर'' नामक विचार दिया। यदि कोई गणितज्ञ एरडोस के साथ कोई शोधपत्र लिखता था तो उसका ''एरडोस नम्बर 1'' होता था। यदि कोई गणितज्ञ (स्वयं एरडोस के साथ शोध पत्र न लिख कर) किसी ऐसे व्यक्ति के साथ शोध पत्र लिखता था जिसका ''एरडोस नम्बर 1'' है तो उसका ''एरडोस नम्बर 2'' होता था। आज के दौर के बहुत से गणितज्ञों के ''एरडोस नम्बर'' बहुत कम हैं। एरडोस स्वयं भी कई बार मजाक के तौर पर ''फंक्शनल एरडोस नम्बर'' का उल्लेख करते थे : यदि किसी व्यक्ति के एरडोस के साथ लिखे गये शोधपत्रों की संख्या 'एन' होती थी तो उसका एरडोस नम्बर 1/एन होता था। केवल दो व्यक्ति (ए. हंजल तथा ए. स्रक्ज़ी) के एरडोस नम्बर 1/50 से कम हैं तथा ऐसे व्यक्तियों की संख्या, जिनका एरडोस नम्बर 1/10 से कम है, 30 के लगभग है।

एरडोस स्वयं भी दूसरे गणितज्ञों के साथ किये गये कार्यों का मूल्यांकन करते थे। मार्क कैक के साथ किये गये कार्य पर टिप्पणी करते हुए वे कहते हैं, ''यह कार्य इस बात का अच्छा उदाहरण है कि दो दिमाग एक से अच्छा कार्य कर सकते हैं क्योंकि हम में से कोई भी यह कार्य अकेले नहीं कर सकता था।'' वह अपने सहकर्मियों के साथ लगातार पत्राचार करते रहते थे। वह हर वर्ष लगभग 1500 पत्र लिखा करते थे। उनके एक सहकर्मी, न्यूयॉर्क विश्वविद्यालय के ''कॉरेन्ट गणित संस्थान'' के डा. जोएल एच. स्पेन्सर कहते हैं ''वे हमेशा गणितीय सत्य की खोज में रहते थे। एरडोस में प्रेरित करने की योग्यता थी। वे ऐसे व्यक्तियों को चुनते थे जो बुद्धिमान होते थे तथा पहले ही कुछ सफलता अर्जित कर चुके होते थे। वे उन्हें नई ऊँचाईयों तक ले जाते थे। उनकी गणित की दुनिया ही वह दुनिया थी जिसमें हम सबने प्रवेश किया।''

एरडोस, महान भारतीय गणितज्ञ श्रीनिवास रामानुजन के कार्य से बहुत प्रभावित थे। उनके शब्दों में ''दुर्भाग्य से मैं रामानुजन से कभी नहीं मिला। जब उनकी मृत्यु हुई तो मैं 7 वर्ष का था, लेकिन मेरे शोध पत्रों से यह स्पष्ट है कि रामानुजन के विचारों ने मेरे गणितीय विकास को बहुत प्रभावित किया है। मैंने बहुत से भारतीय गणितज्ञों के साथ काम किया है। एस. चावला आयु में मुझसे कुछ बड़े हैं। उनके साथ मैंने संख्या सिद्धांत पर कई शोध पत्र लिखे हैं तथा के. अल्लादी के साथ संख्या सैद्धांतिक फलन पर कई शोधपत्र लिखे हैं।''

एरडोस की भारत यात्राओं के बारे में सी.एस. योगानन्द ने ''रेजोनेन्स'' में लिखा, ''एरडोस 1974 में तब भारत आये जब उन्हें भारतीय सांख्यिकी संस्थान, कलकत्ता में एक अधिवेशन के लिये आमंत्रित किया गया। अधिवेशन के बाद वे मद्रास तथा मुंबई गये। इसके बाद वे कई बार भारतीय मानक संस्थान, कलकत्ता की यात्रा पर तथा गणित विज्ञान संस्थान, मद्रास द्वारा संख्या सिद्धान्त विषय पर आयोजित अधिवेशनों में भाग लेने भारत आये। उन्होंने 15 भारतीय गणितज्ञों के साथ 23 शोधपत्र लिखे।

20 सितम्बर 1996 को पोलैण्ड के वारसा शहर में एरडोस का निधन हुआ जहाँ वे एक अधिवेशन में भाग लेने के लिये गये हुए थे। उस समय उनकी आयु 83 वर्ष की थी। सर्वश्रेष्ठ मृत्यु के बारे में बारे में भी एरडोस के अपने अलग विचार थे। 24 सितम्बर 1996 के न्यूयार्क टाइम्स में जीना कोलाटा ने लिखा : ''वे (एरडोस) सर्वश्रेष्ठ मृत्यु के बारे में भी चिन्तन करते थे। उनके विचार में यह एक व्याख्यान के तुरन्त बाद होगी, जब उन्होंने एक गणितीय हल की प्रस्तुति समाप्त की होगी तथा श्रोताओं में से एक नाराज व्यक्ति ने यह पूछने के लिये हाथ उठाया होगा कि 'सामान्य स्थिति में क्या होगा?' डा. एरडोस के अनुसार वे उत्तर देंगे कि 'मेरे विचार से मैं वह अगली पीढ़ी के लिये छोड़ दूंगा' और इसके साथ ही परलोक सिधार जायेंगे।''

सन्दर्भ

1 सी.एस. योगानन्द, पॉल एरडोस, *द वेस्टर्न रामानुजन, रेजोनेन्स,* मार्च 1998।

2 पॉल एरडोस, *रामानुजन एण्ड आई, रेजोनेन्स* (मार्च 1998) में नम्बर थ्योरी, मद्रास 1987 से पुनः प्रकाशित।

3 द कैम्ब्रिज डिक्शनरी ऑफ साइंटिस्ट्स (द्वितीय संस्करण), कैम्ब्रिज : कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 2002।

4 ए डिक्शनरी ऑफ साइंटिस्ट्स, ऑक्सफोर्ड : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1999

5 इन्टरनेट पर उपलब्ध जानकारी

अनुवाद : डॉ. रमेश दत्त शर्मा

गॉर्डन मूर, उनका नियम और एकीकृत परिपथ

❑ शिवप्रसाद एम. खेनेद
ई-मेल : khened@ieee.org

भूमिका

प्रेक्षणों में यदि अंतर्दृष्टि तथा सारतत्व समाहित हो तो वे भविष्योन्मुख बन जाते हैं। ऐसे गहरे प्रेक्षण तब अविस्मरणीय बन जाते हैं जब इतिहास उन्हें सही सिद्ध कर देता है। मूर का नियम चार दशक पूर्व 19 अप्रैल, 1965 को *इलेक्ट्रॉनिक्स* पत्रिका (खंड 38, क्रमांक 8) में इंटेल के सह-संस्थापक गॉर्डन मूर के सरल विचार के रूप में प्रकाशित हुआ था। वह भी ऐसा ही एक भविष्योन्मुख प्रेक्षण है। प्रथम तलीय एकीकृत परिपथ (आई सी) की खोज के मात्र चार वर्ष बाद ही एकीकरण संबंधी मूर की दूरदृष्टि अब एक वास्तविकता बन गई है। एकीकृत परिपथों की अभिकल्पना में सदा विकास को उन्मुख होते नवाचारों, आधुनिक विनिर्माण प्रौद्योगिकियों, पूंजी निवेश, डिजिटल इलेक्ट्रॉनिकी के क्षेत्र में अनुसंधान तथा संचार प्रौद्योगिकी के चलते ऐसा संभव हुआ है। मूर ने अपनी अवधारणाओं को स्पष्ट रूप से नियम के रूप में प्रकट नहीं किया था वरन् उन्होंने तो अपने पत्र का यह शीर्षक रखा था : "एकीकृत परिपथों में अधिक घटकों की अविष्टि।" उन्होंने लिखा, "एकीकृत इलेक्ट्रॉनिकी का भविष्य स्वयं में इलेक्ट्रॉनिकी का ही भविष्य है। एकीकरण के फायदे इलेक्ट्रॉनिकी के प्रसार का कारण बनेंगे और इस तरह इस विज्ञान का अनेक नए क्षेत्रों में पदार्पण होगा। एकीकृत परिपथ घरेलू यानी होम कंप्यूटर – या कम से कम केंद्रीय कंप्यूटर के साथ जुड़े टर्मिनलों – आटोमोबाइलों के लिए स्वतः नियंत्रण प्रणालियां तथा व्यक्तिगत यानी पर्सनल पोर्टेबल संचार उपकरणों जैसे चमत्कारों का जनक बनेंगे। "आज विश्व मूर के नियम के इकतालिसवें वर्ष को मना रहा है। मूर के विचारों ने आधुनिक इलेक्ट्रॉनिकी, संचार एवं सूचना प्रौद्योगिकियों को लगातार संवारा है और मानव सभ्यता को उसके निरंतर लाभ मिल रहे हैं।

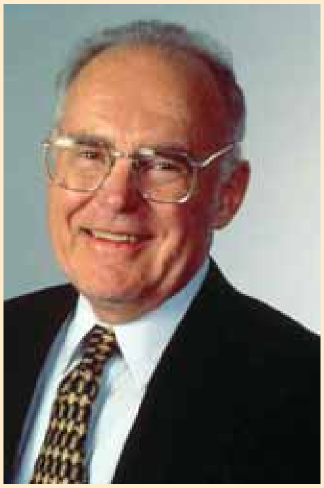

गॉर्डन मूर

जब राबर्ट नॉयस और गॉर्डन मूर ने सन् 1969 में इंटेल की स्थापना की थी। तब से ही मूर का नियम एक लक्ष्य बन गया है जिसने कंपनी के भीतर उत्पादों के विकास का मार्ग प्रशस्त किया है। वस्तुतः, न केवल इंटेल बल्कि संपूर्ण अर्धचालक उद्योग मूर के प्रसिद्ध वक्र के साथ कदम ताल मिलाकर चलने की जद्दोजहद कर रहा है। उद्योग में तकनीकी कार्य दलों द्वारा विशेष टेक्नोलॉजी रोड मैप बनाए जाते हैं जो मूर के नियम के विगत रुख को बनाए रखने की इच्छा से प्रेरित भविष्य में 15 वर्षों की अवधि के दौरान होने वाले विकास के मार्ग को विशद रूप से परिभाषित करते हैं। इस तरह वे मूर के नियम को एक स्वयं-सिद्ध भविष्यवाणी के रूप में परिवर्तित करने में अपनी भूमिका निभाते हैं।

सर्वत्र व्याप्त एकीकृत परिपथ

एकीकृत परिपथ (आई सी) एक नन्हा-सा इलेक्ट्रॉनिक परिपथ होता है जिसे एक पूर्व-अभिकल्पित इलेक्ट्रॉनिक कार्य के निष्पादन के काम में लाया जाता है। अति जटिल कार्य के निष्पादन के लिए सामान्य तौर पर इसे परिपथ के अन्य घटकों के साथ संयोजित किया जाता है। अशुद्धियों के साथ विसरित एकल-क्रिस्टल सिलिकॉन एकक एक अर्धचालक पदार्थ की तरह ही कार्य करते हैं। किसी अर्धचालक की विद्युत चालकता एक कुचालक से अधिक लेकिन एक सुचालक से कम होती है। अधिक सामान्य रूप से इस शब्द (अर्धचालक) का प्रयोग विभिन्न कार्यों का निष्पादन करने वाले आई सी के लिए होता है जिसका विनिर्माण किसी अर्धचालक सबस्ट्रेट पर प्रतिरोधक पदार्थ के संयोजन द्वारा किया जाता है। एक आई सी चिप सिलिकॉन का एक खंड होता है जिस पर सूक्ष्म-विनिर्माण प्रक्रियाओं द्वारा ट्रांजिस्टरों और डायोडों को अंतःस्थापित किया जाता है। इन्हें परस्पर संबद्ध किया जाता है ताकि वे एक इलेक्ट्रॉनिक परिपथ की तरह कार्य कर सकें। धरती की सतह पर सागर तटों पर रेत के रूप में सिलिकॉन बहुतायत से मौजूद होता है। यही कारण है कि इसकी लागत कम होती है।

कई सेंटीमीटर चौड़े एक बारीक वेफर पर एक बार में सैकड़ों अभिन्न एकीकृत परिपथों का विनिर्माण किया जाता है। इस वेफर को बाद में बारीक खंडों में काटा जाता है। इन अलग-अलग खंडों में कटे एकीकृत परिपथों को चिप कहते हैं। बृहत् स्तर एकीकरण (एलएसआइ) में 5,000 परिपथ अवयवों, जैसे कि प्रतिरोधों और ट्रांजिस्टरों को एक सिलिकॉन के वर्ग, जिसकी भुजा 1.3 सेंटीमीटर होती है, जितने क्षेत्र में समाहित किया जाता है। ऐसे सैकड़ों एकीकृत परिपथों को 8 से 15 सेंटीमीटर व्यास के सिलिकॉल वेफर में संयोजित किया जा सकता है। बृहत् स्तर एकीकरण एक ऐसे सिलिकॉन का विनिर्माण कर सकता है जिसमें लाखों-करोड़ों परिपथ अवयव होते हैं। चिप पर स्थित अलग-अलग परिपथ अवयवों को धातु या अर्धचालक की तनु फिल्मों द्वारा परस्पर जोड़ा जाता है। शेष परिपथ से परावैद्युत (डाईइलेक्ट्रिक) की तनु परतों द्वारा उनका विद्युतरोधन किया जाता है। चिपों को ऐसे पैकेजों के रूप में संयोजित किया जाता है जिनमें बाह्य विद्युत चालक तार (लीड) मौजूद होते हैं। इन चालक तारों को प्रिंटेड सर्किट बोर्ड में निवेशन की सुविधा के लिए रखा जाता है ताकि अन्य परिपथों या घटकों के साथ अंतःसंबंधन स्थापित किया जा सके।

स्वीकृत परिपथ को लोकप्रिय भाषा में 'चिप' कहते हैं। यह प्रत्येक इलेक्ट्रॉनिक और संचार उपकरण में होते हैं और सूचना प्रौद्योगिकी (आई टी) का आधार माने जाते हैं। सूचना प्रौद्योगिकी (आई टी) अनेक स्तरों पर हमारे जीवन को प्रभावित करती है। हम इसका प्रयोग सूचना को संकलित, संसाधित, संचारित तथा प्रस्तुत करने के लिए करते हैं। आई टी उच्च तकनीकी प्रक्रियाओं तथा चिकित्सीय नैदानिक उपकरणों एवं दैनंदिन काम में आने वाले घरेलू उपकरणों को नियंत्रित करती है। हमारे समाज द्वारा इसे खासकर पिछले दशक के दौरान अनुभव किए गए आर्थिक उछाल में प्रमुख भूमिका निभाने वाले क्षेत्र के रूप में देखा जाता है। कंप्यूटरों को एक भूमंडलीय जालक्रम (ग्लोबल नेटवर्क) के द्वारा परस्पर जोड़ दिया जाता है जो इंटरनेट के जरिए संचालित होता है। धनी और वंचितों यानी निर्धनों के बीच की डिजिटल दूरी को पाटने में इंटरनेट ने अपनी विशिष्ट भूमिका निभाई है।

सूक्ष्मइलेक्ट्रॉनिक परिपथों के निष्पादन पर एक दृष्टि डालने से यह उद्घाटित होता है कि किसी एकीकृत परिपथ में समाहित ट्रांजिस्टरों की संख्या, लगभग मूर के नियम का पालन करते हुए और वह भी अपरिवर्तित लागत पर, हर दस सालों में लगभग सौ गुना बढ़ती गई है। अगर इस्पात बीसवीं सदी का कच्चा माल था तो इक्कीसवीं सदी में वही स्थान सिलिकॉन का है। सिलिकॉन अर्धचालक उद्योग ने तत्काल लागत में कमी तथा चरघातांकी मूल्य सृजन का एक नाटकीय सर्पिल रूप

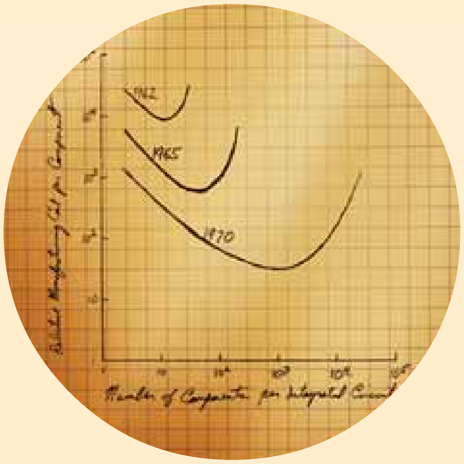

गार्डन मूर का मूल ग्राफ (उनके 1965 के शोध पत्र से) जिससे आगामी वर्षों में एकीकृत परिपथ (आई सी) के बढ़ते घटकों और घटती लागत संबंधी उनके पूर्वानुमान का पता लगता है

प्रस्तुत किया है जो मूर के नियम का अनुपालन करता है। क्षमता में इन सर्पिलाकार वृद्धियों के संचयी अधिप्रभाव के चलते सिलिकॉन आज भी अर्थव्यवस्था का संचालक है। डिजिटल टेलीफोनों और पर्सनल कंप्यूटरों से लेकर स्टॉक बाजारों और अंतरिक्ष यानों को चलाने तथा आज की सूचना प्रधान, सिमटी हुई डिजिटल दुनिया के कार्य-कलापों को संभव बनाने में सिलिकॉन का ही हाथ है। लेकिन, अगर सिलिकॉन टेक्नोलॉजी का विगत नाटकीय रहा है तो इसका भविष्य कहीं अधिक प्रभावशाली और दूरगामी होने का भरोसा दिलाता है। एकीकृत परिपथों में अधिक घटकों को समाहित करने संबंधी मूर का पूर्वानुमान अब एक अत्यधिक उपयोगी तथा सुखद वास्तविकता बन चुका है। मूर के नियम के पूर्वानुमानों को संतुष्ट करने का अर्थ लगभग असंभव कार्य को और वह भी बार-बार अंजाम देना है। उद्योग में कार्यरत सिलिकॉन चिप के डिजायनर ट्रांजिस्टरों के आकार को निरंतर छोटे से छोटा बना रहे हैं। इससे सिलिकॉन चिप बनाने की प्रक्रिया आसान हो रही है और उसके आकार को और भी छोटा करना संभव हो रहा है। प्रक्रिया-संबद्ध ज्यामितियों के आकार को छोटा करने से ट्रांजिस्टरों को चिप में समाहित करने के लिए और अधिक स्थान उपलब्ध हो जाता है। साथ ही विभिन्न प्रकार की युक्तियों और कार्य प्रणालियों को चिप के अंदर ही समाविष्ट किया जा सकता है।

मूर का नियम : चिप पर लगे ट्रांजिस्टरों की संख्या सालाना दोगुना हो जाती है

मूर के नियम को न तो अपने आप में कभी नियम माना गया और न ही एक वैज्ञानिक नियम के रूप में इसे वर्गीकृत किया गया। गॉर्डन मूर ने किसी अर्धचालक चिप पर रचे जा सकने वाले ट्रांजिस्टरों की संख्या के सालाना द्विगुणित हो जाने का पूर्वानुमान लगाने के लिए कभी "नियम" शब्द का प्रयोग नहीं किया। कार्वर मीड, जो उस समय पासाडेना स्थित कैलीफोर्निया इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी (कैलटेक) में थे, ने इसे "मूर का नियम" नाम दिया तथा यह मूर के मूल शोध पत्र के प्रकाशन के अनेक वर्षों बाद हुआ (मीड मैटल ऑक्साइड सेमीकंडक्टर फील्ड इफेक्ट ट्रांजिस्टर यानी मॉसफेट तथा कुछ अन्य खोजों के लिए अधिक जाने जाते हैं)।

एक साक्षात्कार के दौरान जब गॉर्डन मूर से यह पूछा गया कि मूर के नियम की उत्पत्ति कैसे हुई, तब उन्होंने जवाब दिया था, "*इलेक्ट्रॉनिक्स* पत्रिका के संपादक ने पत्रिका की पैंतीसवीं वर्षगांठ को समर्पित अंक के लिए दस वर्षों तक अर्धचालक घटकों के भविष्य पर मुझसे एक लेख लिखने को कहा। मैं इस विचार को लोगों तक पहुंचाना चाहता था कि लागत में कमी लाने में एकीकृत परिपथों का योगदान होगा। अतः मैंने इस बहिर्वेशन का सहारा लिया। उस समय उपलब्ध सबसे बृहत् परिपथ में तीस के करीब घटक होते थे। मैंने ऐतिहासिक रूप से इस पर गौर किया और पाया कि चार, आठ, सोलह आदि के क्रम में बढ़ते हुए हर साल इस संख्या को हम लगभग द्विगुणित करते चले जा रहे थे। मैंने यह नहीं सोचा कि यह इतने विशिष्ट रूप से सटीक सिद्ध होने वाला था। मैं तो महज इस विचार को लोगों तक पहुंचाने की कोशिश कर रहा था कि जटिलता में उल्लेखनीय वृद्धि होने के साथ-साथ लागत में भी काफी गिरावट आने वाली थी और यह मेरे विश्वास से कहीं अधिक सटीक साबित हुआ।"

मूर तब फेयरचाइल्ड कैमरा एंड इंस्ट्रूमेंट कारपोरेशन के फेयरचाइल्ड सेमीकंडक्टर डिविजन के साथ जुड़ी अनुसंधान एवं विकास प्रयोगशालाओं के निदेशक थे। उन्होंने अपने प्रसिद्ध लेख में इस नई टेक्नोलॉजी पर अपनी अंतर्दृष्टि को स्पष्ट रूप दिया था। पूरा लेख मात्र साढ़े तीन पृष्ठों का था जिसमें दो चार्ट और एक कार्टून सदृश चित्र शामिल थे। इस कटाक्ष चित्र में एक खरीदार छोटे घरेलू यानी होम कंप्यूटरों से सज्जित विक्रय बूथ पर अपनी निगाहें गड़ाए था। चिप पर लगे ट्रांजिस्टरों की संख्या के प्रतिवर्ष द्विगुणित होने के अपने पूर्वानुमान के अलावा मूर ने अपने लेख में होम कंप्यूटरों के आविर्भाव का भी पूर्वानुमान प्रस्तुत किया था। उन्होंने ट्रांजिस्टरों के विनिर्माण से जुड़े ऐतिहासिक रुख पर गौर किया हालांकि तब यह अति संक्षिप्त था। उन्होंने यह अनुमान भी लगा लिया कि इस विनिर्माण को संभव बनाने वाली टेक्नोलॉजी यानी फोटोलिथोग्राफी में आगे और उन्नति हासिल करने के मार्ग में कोई तकनीकी अवरोध नहीं थे। साथ ही यह तर्क भी रखा कि विनिर्माण का रुख कम से कम अगले एक दशक तक इस तरह चलेगा कि सन् 1975 तक चिप के कारण ट्रांजिस्टरों की संख्या बढ़कर 65,000 तक हो जाएगी। मूर ने सन् 1975 में अपने पूर्वानुमान में संशोधन करते हुए कहा कि इंजीनियर हर दो वर्षों में ट्रांजिस्टरों की संख्या को द्विगुणित कर सकेंगे। कुल मिलाकर इस प्रक्रिया ने चिप डिजायनरों के लिए औसतन लगभग हर 20 महीनों में इनकी संख्या को दोगुना बढ़ा देना संभव हो गया है।

मूर ने आरंभ से ही इस रुख के आर्थिक आधार पर अपना ध्यान केंद्रित किया और इस पर वह हमेशा टिके भी रहे। यह उस अवधारणा के विरुद्ध था कि प्रौद्योगिकीय रूप से संभव है वही यह निर्धारित करता है कि ट्रांजिस्टर घनत्व को द्विगुणित करने में कितना वक्त लगेगा। मूर ने अपने शोध पत्र में इस बात पर गौर किया कि एक इलेक्ट्रॉनिक घटक में आने वाली लागत साधारण परिपथ में लगे घटकों की संख्या के व्युत्क्रमानुपाती होती है, लेकिन जैसे-जैसे परिपथों की जटिलता बढ़ती जाती है वैसे-वैसे प्रतिलाभ भी कम होता जाता है। दूसरे शब्दों में, अंततः एक समय ऐसा आ जाएगा जब एक चिप पर और अधिक ट्रांजिस्टरों को समाहित करना आर्थिक रूप से फलदाई नहीं होगा। जब अपने ही नियम पर डॉ. मूर को टिप्पणी करने के लिए कहा गया तो वह बोले, "परमाणुओं से रचित किन्हीं भी पदार्थों के लिए एक आधारभूत सीमा होती है जब आप और लघुता में नहीं जा सकते और इससे पहले ही किसी प्रकार की कोई सीमा खड़ी हो जाती है। मेरे अनुसार, यह ट्रांजिस्टरों की संख्या के द्विगुणित होने की दर को सचमुच बदल कर रख देगा। मुझे पहले एक बार हर वर्ष द्विगुणित होने की दर को हर दो वर्षों में द्विगुणित होने में परिवर्तित करना पड़ा था और हो सकता है हमें हर तीन या चार वर्षों में द्विगुणित होने की दर पर आना पड़ेगा। उसके बाद हम सचमुच बड़े आकार के चिप बनाएंगे। अतः एक उपाय हमारे पास अवश्य है। उस समय हम एकीकृत परिपथ में अरबों ट्रांजिस्टरों को समाहित करेंगे।"

मूर के तथाकथित नियम के इतने अधिक प्रचार के बावजूद प्रौद्योगिकी मूर के नियम के साथ सटीक रूप से नहीं चल पाई है। चिपों पर घटकों की संख्या में उल्लेखनीय तेजी से बढ़ोत्तरी हुई है। इसका एक अंदाज एक आई सी में लगने वाले ट्रांजिस्टरों की संख्या के निम्न उदाहरण से लग सकता है : सन् 1965 में चिपों में 60 विभिन्न युक्तियां समाहित थीं; इंटेल में कार्यरत टेड हॉफ द्वारा सन् 1971 में ईजाद किए गए 4,000 आई सी नामक पहले माइक्रोप्रोसेसर में दो हजार से अधिक

ट्रांजिस्टर थे। आज के सभी आधुनिक गृहों और व्यापारिक कंप्यूटरों के मस्तिष्क यानी इंटेल पेंटियम 4 माइक्रोप्रोसेसर, जिसे सन् 2000 में बाजार में लाया गया था, में चार करोड़ से अधिक ट्रांजिस्टर हैं। इंटेल के नवीनतम इटेनियम चिप में 1 अरब 70 करोड़ ट्रांजिस्टर हैं। अब इस भूमंडल में एल्काटेल, ए एम डी, एनालॉग डिवाइसेज, फयरचाइल्ड, फिलिप्स, सैमसंग, टेक्सास तथा ऐसी ही दसों कंपनियां हैं जो बड़ी संख्या में एकीकृत परिपथों का विनिर्माण करती हैं। आई सी के क्षेत्र में कार्यरत अनुसंधानकर्ता तथा इंजीनियर मूर के नियम द्वारा पूर्वानुमानित महत्वपूर्ण लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए अभिकलन वास्तुकला (कंप्यूटिंग आर्किटेक्चर) एवं प्लेटफार्मों के अगले विकास को हासिल करने के निरंतर प्रयास में जुटे हैं।

इलैक्ट्रानिक्स पत्रिका की प्रति जिसमें मूर का शोध पत्र छपा

इंजीनियर यह पूर्वानुमान लगाते हैं कि किसी चिप पर लगे ट्रांजिस्टरों की संख्या पूरे वर्तमान दशक में मोटे तौर पर मूर के नियम का अनुपालन करती रहेगी। जब मूर ने पहले-पहल अपनी अवधारणाओं को स्पष्ट रूप दिया था तब से लेकर अब तक चिपों में समाहित ट्रांजिस्टरों और अन्य घटकों की संख्या में चरघातांकी रूप से बढ़ोतरी हुई है। लेकिन, कोई भी चरघातांकी प्रवृत्ति सदा के लिए चलती नहीं रह सकती। इसे हमेशा के लिए स्थगित अवश्य किया जा सकता है। अगर ट्रांजिस्टरों की संख्या में यह चरघातांकी वृद्धि 21वीं सदी के पहले दशक के काफी बाद भी चलती रहनी चाहिए तो वैज्ञानिकों का यह पूर्वानुमान है कि डिजायनरों को अणुओं के स्व-समुच्चयन जैसी किसी नैनोटैक्नोलॉजी का सहारा लेना होगा ताकि वर्तमान प्रवृत्ति को कम से कम अगले एक या दो दशकों तक बनाए रखा जा सके।

गॉर्डन मूर

गॉर्डन ई. मूर का जन्म 1 जनवरी, 1929 को सैन फ्रांसिस्को, कैलिफोर्निया में हुआ था। उनके माता-पिता सैन फ्रांसिस्को से करीब 70 किलोमीटर दूर स्थित पेस्काडेरो नामक एक छोटे-से कृषक समुदाय के निवासी थे। मूर की विज्ञान में प्रारंभिक रुचि रसायन विज्ञान के एक सेट से बढ़ी जो उनके पड़ोसी ने क्रिसमस के अवसर पर उन्हें भेंट किया था। तब उनकी आयु करीब 11 वर्ष थी। सेट में दिए गए खासकर विस्फोटों से जुड़े प्रयोगों ने उन्हें बहुत प्रेरित किया। उन्होंने अपने घर में एक बड़ी प्रयोगशाला स्थापित की जिसकी मदद से रसायन विज्ञान संबंधी अपनी ज्ञान वृद्धि की और उन्हें नाइट्रोग्लिसरीन तथा अन्य विस्फोटकों की अच्छी पर्याप्त मात्रा प्राप्त करने में भी सफलता मिली। उन्होंने स्थानीय स्कूलों में पढ़ाई की तथा बर्कले स्थित कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय में दाखिला लेने से पहले दो वर्ष सैन जोस स्टेट कॉलेज में भी अध्ययन किया। कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय से मूर ने सन् 1950 में रसायन विज्ञान में बी.एस-सी. की उपाधि ली। सन् 1954 में कैलिफोर्निया इंस्टीट्यूट ऑफ टैक्नोलॉजी से रसायन विज्ञान और भौतिकी में उन्होंने पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की।

सन् 1953 में मूर जोंस हॉपकिंस विश्वविद्यालय की अनुप्रयुक्त भौतिकी प्रयोगशाला के तकनीकी स्टाफ में शामिल हो गए। उन्होंने वहां रसायन भौतिकी में मूल अनुसंधान किया। अर्धचालकों और सिलिकॉन संसाधन प्रौद्योगिकी से उनका प्रथम परिचय शॉकले सेमीकंडक्टर लेबोरेट्री में हुआ जिसके साथ वह सन् 1956 में जुड़े। वहां उन्हें विलियम शॉकले जैसे सनकी जीनियस के मार्गदर्शन में काम करने का मौका मिला जिन्हें अर्धचालक पर शोध करने तथा ट्रांजिस्टर प्रभाव की खोज के लिए जॉन बार्डीन और वाल्टर ब्रेटेन के साथ सन् 1956 में संयुक्त रूप से भौतिकी का नोबेल पुरस्कार प्राप्त हुआ था। मून का मानना है कि वे सही वक्त पर सही जगह पर पहुंचे। उन्होंने अर्धचालक उद्योग में तब पदार्पण किया जब सिलिकॉन ट्रांजिस्टरों का विकास बस आरंभ ही हुआ था। फेयरचाइल्ड में एकीकृत परिपथ की उत्पति तथा इंटेल में माइक्रोप्रोसेसर के विकास और वृद्धि को देखने का सुअवसर उन्हें प्राप्त हुआ।

सन् 1957 में मूर तथा सात अन्य इंजीनियरों तथा वैज्ञानिकों ने विसरित सिलिकॉन ट्रांजिस्टरों के विकास और विनिर्माण के उद्देश्य से शॉकले को छोड़कर फेयरचाइल्ड सेमीकंडक्टर कारपोरेशन की स्थापना की। हालांकि ऐसी युक्तियों के प्रयोगशाला नमूने पहले भी बनाए गए थे, लेकिन व्यावसायिक तौर पर ऐसी कोई भी युक्ति उलब्ध नहीं थी। वे आठों व्यक्ति जो शॉकले को छोड़कर चले गए थे, उन्हें शाकले ने "दगाबाज आठ" का खिताब दिया था। आज की सिलिकॉन वेली शॉकले और उन "दगाबाज आठ" शिष्यों की ही देन है। सन् 1959 से लेकर सन् 1968 तक, जब इंटेल का सह-संस्थापक बनकर मूर ने फेयरचाइल्ड छोड़ा, वह इसके अनुसंधान एवं विकास निदेशक बने रहे।

फेयरचाइल्ड में मूर की जिम्मेदारी उस दल की तरफ थी जिसने पहले द्वि-विसरित सिलिकॉन ट्रांजिस्टर विकसित करके उसके उत्पादन को संभव बनाया था। इसमें ट्रांजिस्टर के विनिर्माण के लिए फोटोलिथोग्राफी का पहली बार उपयोग किया गया। इस प्रक्रिया का विकास नायॅस के मार्गदर्शन में किया गया था। इस समयसीमा में फेयरचाइल्ड सेमीकंडक्टर की स्थापना करने वाले आठ लोगों में से एक जीन हॉर्नी ने तलीय (प्लेनर या एपिटेक्सिएल) ट्रांजिस्टर संरचना की खोज की। यह विकसित ट्रांजिस्टर का ही एक अन्य रूप था जिसकी संधियों पर सिलिकॉन ऑक्साइड का उपयोग किया गया था। इससे अधिक विश्वसनीय ट्रांजिस्टर बनाना संभव हुआ। सन् 1968 में मूर और राबर्ट एन. नॉयस ने फेयरचाइल्ड छोड़कर इंटेल कारपोरेशन की स्थापना की। शुरू में मूर इंटेल के कार्यकारी उपाध्यक्ष थे। सन् 1975 में वह इसके अध्यक्ष और मुख्य कार्यकारी अधिकारी (सी ई ओ) तथा सन् 1979 में इंटेल बोर्ड के चेयरमैन और सी ई ओ बने। वह सन् 1987 तक इंटेल के सी ई ओ बने रहे। मूर काफी सालों तक इंटेल बोर्ड के चेयरमैन बने रहे और अब, इंटेल के निदेशकों के लिए अधिदेशात्मक सेवा निवृत्ति की आयु को पूरा करने के बाद इसके चेयरमैन एमरिटस हैं।

सन् 2005 में "मूर के नियम" की चालीसवीं वर्षगांठ मनाते हुए कोलंबिया विश्वविद्यालय स्थित मारकोनी फाउंडेशन ने मूर को आजीवन उपलब्धि के पुरस्कार से नवाजा। रेडियो प्रवर्तक और नोबेल पुरस्कार विजेता मारकोनी के नाम पर बने कोलंबिया के गुग्लीएल्मो मारकोनी इंटरनेशनल फैलोशिप फाउंडेशन ने उन्हें यह सम्मान "उस प्रौद्योगिकी में उनके नवाचारी योगदान के लिए जो हमारे दैनंदिन जीवन को संचालित करता है, उनकी उद्यमी भावना तथा उस सहयोगी प्रवृति के प्रति उनकी निष्ठा के लिए दिया जिसने इंटेल के उद्भव और उसकी सफलता को प्रेरित किया।" यह उन्हें आजीवन उपलब्धि पुरस्कार 4 नवंबर, 2005 को दिया गया। फाउंडेशन के 32 वर्ष के लंबे इतिहास में उनके अलावा यह पुरस्कार केवल और दो व्यक्तियों को प्रदान किया गया था। यह फाउंडेशन वार्षिक फैलोशिप प्रदान करने के लिए अधिक प्रसिद्ध है। इसके द्वारा प्रदान की गई फैलोशिप पाने वालों में गूगल के सर्जी ब्रिन और लैरी पेज, इंटरनेट

के प्रवर्तक टिम बरनर्स-ली तथा प्रसिद्ध विज्ञान कथा लेखक आर्थर सी. क्लार्क शामिल हैं जिन्होंने वैश्विक उपग्रह संचार की संकल्पना को स्पष्ट रूप प्रदान किया।

एकीकृत परिपथों का संक्षिप्त इतिहास

मूर के नियम को तब अच्छी तरह से समझा जा सकता है जब हम उस ऐतिहासिक विकासक्रम के बारे में जानें जिसमें एकीकृत परिपथों की खोज संभव हुई। हमारे संसार में एकीकृत परिपथों का बोलबाला है। उनमें से कई आप कंप्यूटर में देख सकते हैं। आज दैनंदिन इस्तेमाल की लगभग सभी युक्तियों जैसे कार, टेलीविजन, सीडी प्लेयर, मोबाइल फोन, कलाई घड़ियों, कैल्कुलेटर, वाशिंग मशीन, रेफ्रिजरेटर, माइक्रोवेव ओवन आदि में इनका उपयोग होता है। एकीकृत परिपथ और कुछ नहीं बल्कि एक अति उन्नत वैद्युत परिपथ ही है। यह ट्रांजिस्टरों और प्रतिरोधों, कैपेसिटरों तथा डायोडों जैसे अन्य घटकों से मिलकर बना होता है। अर्धचालक पदार्थ के एकल खंड में उन्हें आपस में जोड़कर एक वैद्युत परिपथ की रचना की जाती है। एकीकृत परिपथ में लगने वाले सभी घटकों में सबसे महत्वपूर्ण घटक ट्रांजिस्टर ही होते हैं। ट्रांजिस्टर एक स्विच की तरह कार्य करता है। यह विद्युत को चालू या बंद अथवा बढ़ा भी सकता है। उदाहरण के लिए यह कंप्यूटरों में सूचना भंडारण या स्टीरियो एम्प्लिफायरों में ध्वनि संकेतों को बढ़ाने के काम में भी लाया जाता है।

ट्रांजिस्टर प्रभाव की खोज तथा उसके बाद विलियम शॉकले, जान बार्डीन तथा वाल्टर ब्रेटेन द्वारा की जाने वाली ट्रांजिस्टर युक्ति की खोज वह मुख्य कारण था जो भविष्य में होने वाली एकीकृत परिपथ की खोज का सूत्र बिंदु बना। उनके द्वारा उत्पादित पहला ट्रांजिस्टर जर्मेनियम से बना था। टेक्सास इंस्ट्रूमेंट्स से जुड़े भौतिकीविद गॉर्डन टील ने महंगे जर्मेनियम के स्थान पर सिलिकॉन से बने संधि यानी जंक्शन ट्रांजिस्टर के विनिर्माण को पूर्णता प्रदान की। संयोगवश, साधारण रेत का मुख्य संघटन सिलिकॉन ही है तथा यह पृथ्वी पर दूसरा सबसे अधिक पाया जाने वाला तत्व है। सिलिकॉन ही अब आधुनिक इलेक्ट्रॉनिक, संचार तथा सूचना प्रौद्योगिकी उद्योग का मेरुदंड है।

जी डब्ल्यू ए ड्यूमीस नामक एक अंग्रेज रेडार विशेषज्ञ ने सबसे पहले एकीकृत परिपथ की संकल्पना को सामने रखा। उसमें ट्रांजिस्टर, प्रतिरोध आदि घटकों को समाहित किया जा सकता था। लेकिन, अपनी इस प्रस्तावित संकल्पना को साकार करने के प्रयास में उन्हें सफलता नहीं मिली। आई सी और सूक्ष्म इलेक्ट्रॉनिकी संबंधी प्रौद्योगिकियों की दिशा में असली अनुसंधान एवं परीक्षण 1950 के दशक के अंतिम वर्षों में शुरू हुए। इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों का लघुकरण ही उसका उद्देश्य था ताकि सीमित स्थान और कम वजन में उत्तरोत्तर जटिल होते इलेक्ट्रॉनिक प्रणालियों को अंजाम दिया जा सके। अनेक तरीकों का विकास किया गया जिनमें अलग घटकों के लिए सूक्ष्म समुच्चयन तकनीक, तनु-फिल्म संरचनाएं तथा अर्धचालक एकीकृत परिपथ भी शामिल थे। हर तरीके का विकास द्रुत गति से हुआ और उनका मिलन हुआ जिससे एक-दूसरी तकनीक का लाभ उठाया जा सका।

गॉर्डन मूर (बीच में) साथ में हैं रॉबर्ट नॉयस तथ एंडी ग्रूव। इन्होंने इंटेल कंपनी की नींव रखी।

विश्व का पहला आई सी जर्मेनियम से बना एक पतला वेफर था। इस युक्ति में पांच घटक थे जिन्हें अंग्रेजी के अक्षर एल, यू या अन्य विन्यासों का आकार देकर वैद्युतिक रूप से एक-दूसरे से विलगित किया गया था। घटकों को परस्पर तथा बिजली आपूर्ति से जोड़ने वाले लघु तारों को सोल्डर करके जोड़ा गया और इस पूरे समुच्चय को मोम द्वारा दृढ़ता प्रदान की गई। जैक किल्बी जो टैक्सास इंस्ट्रूमेंट्स के साथ हाल ही में जुड़े थे, उन्होंने इस युक्ति का विकास किया। जनवरी, 1959 में टैक्सास ने आई सी के जन्म की सार्वजनिक रूप से घोषणा की। अपनी नव-विकसित युक्ति की क्षमता को प्रदर्शित करने के लिए टैक्सास ने अमेरिकी वायु सेना के लिए एक कंप्यूटर बनाया जिसमें 587 एकीकृत परिपथों का इस्तेमाल किया गया था। इस कंप्यूटर का आकार अपने पूर्ववर्ती कंप्यूटर की तुलना में 1/50 गुना कम था। किल्बी ने आई सी के विकास को संभव बनाया। उनके योगदान के लिए वर्ष 2000 का भौतिकी का नोबेल पुरस्कार प्रदान किया गया। अपनी खोज के बारे में जब उनसे टिप्पणी करने को कहा गया तो किल्बी (अब स्वर्गवासी) ने कहा, "हम जिस चीज का एहसास नहीं कर पाए वह यह कि एकीकृत परिपथ इलेक्ट्रॉनिक प्रकार्यों को अंजाम देने की लागत को एक में दस लाख के गुणक से कम कर देगा; किसी भी चीज से पहले तक ऐसा संभव नहीं हुआ था।"

एकीकरण स्तर

एकीकृत परिपथों को अब मोटे तौर पर डिजिटल यानी सांख्य (या तार्किक) तथा लिनियर यानी अनुरूप (या रैखिक) एकीकृत परिपथों में वर्गीकृत किया जाता है। सांख्य यानी डिजिटल एकीकृत परिपथों का इस्तेमाल माइक्रोप्रोसेसरों तथा स्मृतियों जबकि अनुरूप यानी एनालॉग एकीकृत परिपथों का इस्तेमाल टाइमर, प्रवर्धक तथा ऑस्सीलेटर के रूप में किया जाता है। लेकिन कुछ ऐसे एकीकृत परिपथ भी हैं जो डिजिटल और एनालॉग एकीकृत परिपथों के संयोजन से मिलकर बनते हैं। एकीकृत परिपथों को चिप पर लगने वाले इलेक्ट्रॉनिक घटकों के एकीकरण के आधार पर लघु स्तर एकीकरण (एस एस आई), मध्यम स्तर एकीकरण (एम एस आई), बृहत् स्तर एकीकरण (एल एस आई), अति बृहत् स्तर एकीकरण (वी एल एस आई), परा बृहत् स्तर एकीकरण (यू एल एस आइ) तथा वेफर स्तर एकीकरण (डब्ल्यू एस आइ) आदि में भी वर्गीकृत किया जाता है।

प्रारंभिक एकीकृत परिपथों में बस कुछ ही ट्रांजिस्टर समाहित होते थे। इन शुरुआती एकीकृत परिपथों को एस एस आई वर्ग में रख जाता है। ये ऐसे परिपथों का इस्तेमाल करे हैं जिनमें ट्रांजिस्टर तथा अन्य घटकों की संख्या 100 तक होती है। इन एस एस आई एकीकृत परिपथों की प्रसिद्ध अपोलो अंतरिक्ष कार्यक्रमों सहित अन्य प्रारंभिक एयरोस्पेस अनुप्रयोगों में बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका रही थी। एकीकृत परिपथों के विकास में अगला चरण 1960 के दशक के बाद के दौर में आया। इसने ऐसी युक्तियों का विकास संभव बनाया जिनमें हर चिप में सैकड़ों ट्रांजिस्टर समाहित होते थे। इसे एम एस ई नाम दिया गया। इसमें हर चिप में 100 से लेकर 3,000 इलेक्ट्रॉनिक घटक मौजूद थे। एकीकृत परिपथों में युक्तियों की संख्या में बढ़ोत्तरी आर्थिक रूप से आकर्षित करने वाली थी क्योंकि एस एस आई युक्तियों की तुलना में एम एस आई युक्तियों के उत्पादन में बेशक कुछ अधिक लागत आती है, लेकिन लघु आकार के सर्किट बोर्ड की मदद से ही अधिक जटिल प्रणालियों के विकास को यह संभव बनाती है। इसमें कम समुच्चयन कार्य को अंजाम देने की जरूरत पड़ती है। आर्थिक कारकों से आई सी उद्योग का मार्गदर्शन होता रहा जिसके कारण 1970 के दशक में एल एस आई तकनीकों का विकास संभव हुआ। एल एस आई युक्तियों में प्रति चिप 3,000 से लेकर 1,00,000 तक इलेक्ट्रॉनिक घटक हो सकते हैं। सन् 1970 के दशक के दौरान कंप्यूटरों तथा कैल्कुलेटरों की स्मृतियों की बढ़ती आवश्यकता बड़ी संख्या में एल एस आई परिपथों के उत्पादन का कारण बनी। सन् 1980 के दशक के शुरुआती दौर में कंप्यूटर उद्योग की लगातार बढ़ती जटिलता एवं आवश्यकता अगले स्तर के एकीकरण का कारण बनी। इसे वी एल एस आई नाम दिया गया। इसमें प्रति चिप 1,00,000 से लेकर 10,00,000 तक इलेक्ट्रॉनिक घटक समाहित थे। अधिक जटिलता को देखते हुए ऐसे चिपों के लिए यू एल एस आई नाम प्रस्तावित किया गया जिसमें प्रति चिप घटकों की संख्या 10 लाख से भी

चित्र 8-1

मूर का नियम : 1971-2005

ट्रांजिस्टर संख्या (लॉग स्केल)

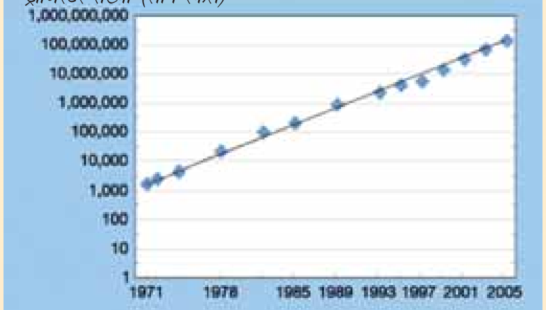

टिप्पणी : ग्राफ की रेखा मूर के नियम की व्याख्या दर्शाती है।
आंकड़े वास्तविक (1971-2001) तथा अनुमानित (2003-2006)
साइंस एंड इंजीनियरिंग इंडिकेटर्स-2002

ग्राफ मूर के नियम तथा 1971 से 2005 तक के उनके पूर्वानुमान की कम या अधिक समानता दर्शाते है।

ऊपर थी। बहरहाल, वी एल एस आई और यू एल एस आई के बीच मात्रात्मक रूप से कोई अंतर नहीं है। इसलिए तकनीकी दृष्टि से "वी एल एस आई" सामान्यतया यू एल एस आई को भी निरूपित करता है। "यू एल एस आई" का प्रयोग केवल उन्हीं स्थितियों में किया जाता है जहां चिप की जटिलता को रेखांकित किया जाना आवश्यक है। अंतरराष्ट्रीय वी एल एस आई सम्मेलन इंस्टीट्यूट ऑफ इलेक्ट्रिकल एंड इलेक्ट्रॉनिक्स इंजीनियर्स (आई ई ई ई) तथा अन्य बहुप्रतिष्ठित विश्व संस्थाओं के तत्वावधान में ही सामान्य रूप से आयोजित किए जाते हैं। इनमें एकीकरण की सीमाओं तथा अगले दो से तीन दशकों तक मूर के नियम को इसी तरह मानते चले जाने से संबंधित मुद्दों को संबोधित किया जाता है।

भविष्य

इंटेल के प्रधान कार्यकारी अधिकारी क्रेग बैरेट ने अपना यह पूर्वानुमान प्रस्तुत किया है कि मूर का नियम आगामी वर्षों में चिप की क्षमता में बढ़ोत्तरी करेगा। इसे पहले तो पारंपरिक विनिर्माण प्रक्रियाओं तथा उसके उपरांत अनेक वर्षों तक किसी अन्य प्रौद्योगिकी द्वारा अंजाम दिया जाएगा। बैरेट के पूर्वानुमान के अनुसार चिप निर्माण की पारंपरिक प्रौद्योगिकी 5 नैनोमीटर, जो 50 हाइड्रोजन परमाणुओं को साथ-साथ रखने पर बनने वाली मोटाई है, जितने सूक्ष्म लक्षणों को चिप में समाहित कर पाने में सक्षम होगी। इनका इस्तेमाल संसाधित्रों यानी प्रोसेसरों में किया जा सकेगा। इंटेल आजकल ऐसे प्रोसेसरों को बाजार में लाने की तैयारी कर रहा है जिनमें 65 नैनोमीटर या एक मीटर के दस अरबवें भाग जितने सूक्ष्म लक्षण समाहित किए जा सकें। मूर का नियम पिछले 40 वर्षों से अपनी जड़ें जमाए हुए है। आने वाले कम से कम बीस वर्षों तक इसके इसी तरह अस्तित्व में बने रहने की संभावना है। उसके बाद क्या होगा इसका पता तो आने वाले वर्षों में ही कभी चल सकेगा।

शिवप्रसाद एम. खेनेद, क्यूरेटर (इलैक्ट्रॉनिक्स), नेहरू साइंस सेंटर, मुंबई

अनुवाद : आभास मुखर्जी

(पृष्ठ 2 का शेष)

मच्छरो भाग जाओ!

निकल आती हैं। यह रोग प्रायः घातक नहीं होता और इसका प्रकोप मुख्य रूप से शहरी इलाकों में होता है। डेंगू की तरह ही चिकनगुनिया का भी कोई विशेष उपचार नहीं है। चिकनगुनिया विषाणु वाहक मच्छर के काटने के बाद रोग के लक्षण उभारने में एक से लेकर बारह दिन का समय लगता है। रोग का पता रक्त परीक्षण करके लगाया जा सकता है। जिन इलाकों में डेंगू का भी प्रकोप हो, वहां प्रयोगशाला परीक्षणों में चिकनगुनिया विषाणु की पुष्टि करना आवश्यक है।

चूंकि डेंगू और चिकनगुनिया दोनों के उपचार का कोई विशेष तरीका नहीं है, इसलिए सवाल यह उठता है कि इनकी रोकथाम कैसे की जाए? अब तो मलेरिया भी लौट आया है। दुनिया भर में औसतन 30 करोड़ व्यक्ति मलेरिया से पीड़ित हैं और इससे हर साल 15 लाख व्यक्तियों की मृत्यु हो जाती है। विश्व के 100 से भी अधिक देशों में डेंगू स्थानीय रोग बन चुका है और विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार विश्व की 40 प्रतिशत आबादी के लिए इस रोग का खतरा बना हुआ है। इसकी रोकथाम का एक ही कारगर तरीका है जो विश्व के कई भागों में सफल भी रहा है। यह है, रोगवाहक कीट पर नियंत्रण अर्थात् मच्छरों के प्रजनन को रोकना।

शुरुआत में मच्छरों को मारने के लिए डीडीटी का धूमन बहुत कारगर साबित हुआ। लेकिन, जल्दी ही *एनोफेलीज़* मच्छर में प्रतिरोध क्षमता विकसित हो गई और उसने कई गुना अधिक ताकत और संख्या में हमला कर दिया। दूसरी ओर दुनिया भर में वनस्पतियों तथा पर्यावरण पर इसके हानिकारक प्रभाव के कारण डीडीटी के प्रयोग पर पाबंदी लगा दी गई। डेंगू फैलाने वाले मच्छर बंधे हुए या जमा किए हुए खुले पानी में पनपते हैं। पीपे, ड्रम, जार, बाल्टियां, गमले, टायर, कूलर आदि में अगर पानी जमा है तो उसमें इनका खूब प्रजनन होता है। इसलिए मच्छरों की संख्या को बढ़ने से रोकने के सर्वोत्तम तरीका यह है कि कूलरों, एयर कूलरों (जब उपयोग न कर रहे हों), टंकी, पीपे, ड्रम या बाल्टियों का पानी फेंक दें। साथ ही, पौधे लगाने की प्यालियों, फूलदानों आदि ऐसी सभी चीजों को घर से बाहर निकाल दें जिनमें पानी जमा रहता है। खाली बोतलों, प्लास्टिक के थैलों, डिब्बे, बेकार टायरों आदि में भी पानी जमा होता है। इन्हें नष्ट कर देना चाहिए। एक आसान तरीका यह भी है कि मच्छरों से बचने के लिए पूरे कपड़े पहनें और अपने शरीर का कोई भी अंग खुला न रहने दें।

वियतनाम और आस्ट्रेलिया में मच्छरों के प्रजनन की रोकथाम करने के लिए सामुदायिक स्तर पर प्रयास किए गए हैं। इसके लिए वे झींगी अर्थात् श्रिम्प से मिलते-जुलते जलीय जीव 'मेसोसाइक्लॉप्स' का लाभ उठा रहे हैं। जब मच्छरों के प्रजनन क्षेत्र में मेसोसइक्लॉप्स डाले गए तो उन्होंने मच्छरों की 96 से लेकर शत्-प्रतिशत तक आबादी चट कर डाली। इन प्राकृतिक जैव नियंत्रकों ने मच्छरों और उनके लार्वे खा डाले। यहां यह बताना जरूरी है कि यह कार्य लोगों के सहयोग से और उन्हें यह समझाने पर संभव हो सका कि सरकारी मशीनरी पर निर्भर करने के बजाय वे इस समस्या को स्वयं हल करें। इस प्रकार के जैव नियंत्रण में लागत भी कम लगती है और इसका कोई अन्य दुष्प्रभाव भी नहीं पड़ता।

मच्छरों के प्रजनन और विषाणु के उत्परिवर्तन अर्थात् म्यूटेशन पर कड़ी निगरानी रखना बेहद जरूरी है। उतना ही आवश्यक है इन बीमारियों के उपचार के लिए विस्तृत विवरण तथा क्रियाविधि का विकास जिसे प्राथमिक चिकित्सा केन्द्र तक उपलब्ध किया जाए अन्यथा अगले साल मानसून में फिर वही कहानी दुहराई जाएगी तथा डेंगू और चिकनगुनिया के विषाणु और भी अधिक घातक रूप से वापस लौट सकते हैं। चिकित्सकों और विज्ञान संचारकों को इस रोग की रोकथाम के कारगर तरीकों की जानकारी जनसाधारण को देनी होगी। मच्छरों को भगाने का सबसे अच्छा तरीका यही होगा।

❐ **विनय बी. काम्बले**

3-डी दृश्य और होलोग्राफी का अद्‌भुत संसार

❑ आर एस सिरोही
ई-मेल : rs_sirohi@yahoo.co.in

हम एक त्रिआयामी दुनिया में रहते हैं और अपने चारों ओर 3-आयामी वस्तुओं और संवेदों को देखते और अनुभव करते हैं। प्रत्येक वस्तु में, जिसे हम देखते हैं, उसमें लंबाई, चौड़ाई और ऊंचाई का अनुभव करते हैं। अगर वस्तु कुछ दूरी पर है तो हम दूरी का भी अनुभव कर सकते हैं। हम तीन आयामों में कैसे देखते हैं? हमें गहराई का अनुभव कैसे होता है? क्या हम द्विआयामी फोटोग्राफ और बिंबों से तीन आयामी वस्तुएं और दृश्य बना सकते हैं? होलोग्राफी किस तरह तीन आयामी वस्तुएं और दृश्य बनाती है? आइए, इन प्रश्नों के उत्तर तलाशने की कोशिश करें।

जब हम किसी चीज को देखते हैं तो हमारी दोनों आंखें दृश्य के कुछ भिन्न परिदृश्य प्रस्तुत करती हैं। इसे बहुत सरलता से, एक आंख बंद करके बारी-बारी से उसी दृश्य को देख कर सत्यापित किया जा सकता है, विशेष रूप से सामने और निकट रखी किसी वस्तु को देख कर। हालांकि दोनों आंखों से बनने वाले बिंब अलग-अलग होते हैं, मस्तिष्क दोनों बिंबों को मिश्रित कर तीन आयामी बिंब बनाता है जैसा कि चित्र 1 में दिखाया गया है।

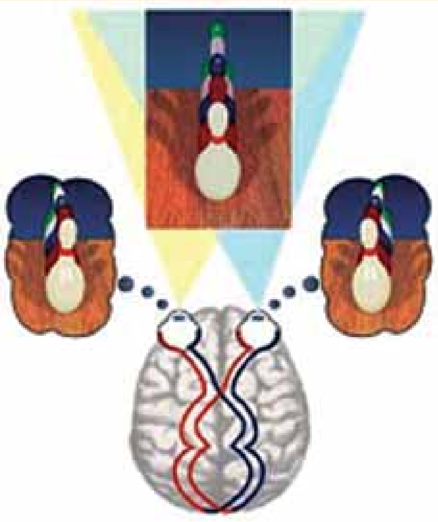

चित्र 1 : हर आंख वस्तु का भिन्न परिदृश्य प्रस्तुत करती है और मस्तिष्क 3-डी दृश्य बनाता है।

जैसे-जैसे किसी वस्तु की दूरी बढ़ती है, आंख की गहराई का अनुमान लगाने की क्षमता भी घट जाती है। उदाहरण के लिए, हमारी आंखें दो वस्तुओं के बीच की दूरी का सरलता से अनुमान लगा सकती हैं - एक 5 मीटर की दूरी पर रखी है और दूसरी 10 मीटर की दूरी पर। लेकिन, अगर दोनों वस्तुओं को क्रमशः 100 मीटर और 110 मीटर की दूरी पर रख दिया जाए तो आंखों से उनके बीच की दूरी का अनुमान लगाना कठिन होगा। ठहरी हुई आंखों के लिए वे लगभग समान दूरी पर ही होंगी। हमें याद रखना चाहिए कि हम केवल दोनों आंखों का प्रयोग करके ही गहराई का पता लगा सकते हैं। केवल एक आंख से हम गहराई का अनुभव नहीं कर सकते। आप एक आंख बंद करके, सुई में धागा डालने का प्रयास करके यह आसानी से देख सकते हैं। यह लगभग असंभव होगा!

यहां थोड़ा विषयांतर करना और समान आवर्धन वाले टेलिस्कोप और दूरबीन की कार्यविधि में अंतर को समझना ठीक रहेगा।। यह तो पता ही है कि टेलिस्कोप से दूर की चीजें पास दिखाई देती हैं। लेकिन, 'पास' से हमारा क्या तात्पर्य है? क्या होता है जब कोई दूर की वस्तु पास आती है? हमारी आंख पर बनने वाली वस्तु का कोण बड़ा हो जाता है। वास्तव में, दो वस्तुओं के आपेक्षिक आकार केवल उन कोणों पर निर्भर करते हैं जो वे हमारी आंख पर बनाती हैं। जितना बड़ा कोण होता है उतनी बड़ी वस्तु दिखाई देती है।

टेलिस्कोप या दूरबीन एक और काम करती है। चूंकि अभिदृश्यक (ऑब्जेक्टिव) लैंस का व्यास हमारी आंख की पुतली से कहीं अधिक होता है, इसीलिए वस्तु अधिक चमकदार दिखायी देती है। अगर हम रात को आकाश को देखें तो कोरी आंखों से न दिखायी देने वाले अदृश्य तारे भी दिखायी देने लगते हैं। इसलिए, फोकल दूरी की तुलना में अभिदृश्यक व्यास जितना अधिक होगा, दूर की वस्तु उतनी ही चमकदार दिखायी देगी। अभिदृश्यक का अधिक व्यास विभेदन (रिजोल्यूशन) को भी बढ़ा देता है अर्थात् दो दूरस्थ वस्तुओं को दो भिन्न वस्तुओं के रूप में बहुत निकट देखना सरल हो जाता है।

अब अगर हम समान एफ (f) संख्या वाले एक टेलिस्कोप और दूरबीन की तुलना करें तो दोनों की दृश्य क्षमता समान होगी। लेकिन, दूरबीन का अतिरिक्त लाभ यह होता है कि यह दूरस्थ वस्तुओं का त्रिआयामी (3-डी) बिंब प्रदान करती है। इसके अलावा, चूंकि दूरबीन में दो अभिदृश्यक लैंसों के बीच की दूरी हमारी दोनों आंखों के बीच की दूरी से कहीं ज्यादा होती है, इसलिए 3-डी प्रभाव कहीं अधिक स्पष्ट होता है और स्टीरियोस्कोपिक परास (रेंज) भी ज्यादा होता है। दूरबीन में अभिदृश्यकों के बीच की ज्यादा दूरी भी बिंबों के परिदृश्य में काफी अंतर कर देती है।

लंबन (पैरेलक्स) की भूमिका

3-डी पर्यवेक्षण की भौतिकी में लंबन, प्रक्षेप और प्रत्यक्ष ज्ञान शामिल होते हैं। गहराई का भ्रम उत्पन्न करने के लिए दो बिंब थोड़े से विस्थापित हो जाते हैं। उदाहरण के लिए, एक ही दृश्य के दो बिंबों को एकसाथ हमारी आंखों के बीच की दूरी के बराबर दूरी पर रखे दो लैंसों से लिया जाए तो प्रत्येक बिंब हमारी प्रत्येक आंख द्वारा अलग-अलग देखे बिंब के समान होगा। अब अगर कोई ऐसी व्यवस्था की जाए जिससे दाहिनी आंख केवल दाहिने लैंस द्वारा लिए गए बिंब को देखे और उसी प्रकार बांई आंख केवल बाएं लैंस द्वारा लिए गए बिंब को देखे तो देखने वाले के लिए दृश्य 3-डी हो जाता है।

2-डी बिंबों से 3-डी बिंबों के पर्यवेक्षण की अनेक विधियां हैं। सबसे अधिक प्रयोग की जाने वाली युक्तियों में से एक स्टीरियोस्कोप कहलाती है

जिससे एक आंख से केवल एक ही बिंब देखा जा सकता है। इस प्रकार दो कुछ विस्थापित बिंबों या फोटोग्राफों को इस प्रकार रखा जाता है कि प्रत्येक आंख केवल एक ही बिंब देखती है और मस्तिष्क 3-डी बिंब बनाता है। स्टीरियोस्कोप का एक सरल रूप है 'व्यू मास्टर', जिसे किसी भी खिलौने की दुकान या डिपार्टमेंटल स्टोर से खरीदा जा सकता है। इसमें एक व्यू मास्टर रील अर्थात् एक गोलाकार पहिया होता है जिसमें एक ही दृश्य की अनेक पारदर्शियां व्यासीय रूप से आमने सामने किंतु कुछ हटकर लगी होती हैं जैसा कि चित्र 2 में दिखाया गया है।

चित्र 2: व्यू मास्टर और उसकी रील

ऑटोस्टीरियोग्राम एक एक-बिंबीय स्टीरियोग्राम होता है जिसे मानव आंख और दिमाग को द्वि-आयामी बिंब में तीन-आयामी (3-डी) दृश्य देखने का धोखा देने के लिए बनाया गया है। इन ऑटोस्टीरियोग्रामों में 3-डी आकार 'देखने' के लिए, मस्तिष्क को आंखों की फोकस करने की प्रक्रिया को अभिबिंदुता से पूरी तरह जोड़ना चाहिए अर्थात् दोनों आंखें दो अध्यारोपित बिंबों को अलग-अलग देख सकें। इन बिंबों को इस प्रकार भी देखा जा सकता है कि दाईं आंख बाएं बिंब को और बाईं आंख दाहिने बिंब (क्रास-आईड) को देखे, या फिर दाहिनी आंख दाहिने बिंब को और बाईं आंख बाएं बिंब को (वाल्ड आईड) देखती है।

सबसे सरल प्रकार के ऑटोस्टीरियोग्राम में अनुप्रस्थ अनुवर्ती पैटर्न होते हैं और इसे 'वॉलपेपर ऑटोस्टीरियोग्राम' कहते हैं। हम कंप्यूटर का प्रयोग करके ऑटोस्टीरियोग्राम बना सकते हैं। ये सादे कागज पर बने पैटर्न होते हैं और ठीक प्रकार से देखने पर 3-डी बिंब बनाते हैं। इन्हें मैजिक आई पिक्चर के नाम से भी जाना जाता है। मैजिक आई पिक्चर बनाने के पहले चरण में एक 3-डी ग्रे स्केल बिंब बनाया जाता है। यह वह बिंब है जो बाद में छिप जाएगा। तब यह बिंब गहराई का नक्शा बन जाता है। इसके बाद, एक 2-डी पैनल या पैटर्न बनाया जाता है। फिर इस पैटर्न को पूरे पृष्ठ

चित्र 3: मैजिक-आई तस्वीर

पर दोहराया जाता है। कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर का प्रयोग करके इस पैटर्न को गहराई के नक्शे के साथ मिश्रित करके मैजिक आई पिक्चर बनाई जाती है। चित्र 3 में ऐसा ही चित्र दिखाया गया है। 3-डी तस्वीर देखने के लिए, इसे लगभग 30 सेमी दूर रखिए और अपनी आंखों को तस्वीर के पीछे एक बिंदु पर फोकस कीजिए। जब सही अभिबिंदु (वाल्ड आईड) के साथ दिखने लगे, 'वस्तु' पृष्ठभूमि के ऊपर हवा में तैरती लगती है। यदि क्रास आईड देखा जाए तो वस्तु पृष्ठभूमि के विरूद्ध डूबी हुई सी लगती है।

3-डी प्रर्यवेक्षण के लिए फिल्टर

एक अन्य विधि में रंगीन फिल्टरों के गुण का उपयोग किया जाता है और इस तथ्य का भी कि लाल और नीला मिलाने से काला या ग्रे रंग मिलता है। दो हल्के से विस्थापित फोटोग्राफ अलग-अलग रंग में बनाए जाते हैं। मान लीजिए लाल और नीले रंग के। इन बिंबों को विभिन्न रंगों में स्थानांतरित किंतु हल्का सा विस्थापित करके एक संयुक्त फोटोग्राफ बनाया जाता है। जब इस संयुक्त फोटोग्राफ को एक लाल और नीले फिल्टर लगे चश्मे से देखा जाता है तो प्रत्येक आंख इसके लिए बने चित्र को देखेगी। लाल फिल्टर के जरिए केवल नीले में प्रकाशित बिंब दिखाई देगा जबकि नीले फिल्टर के जरिए केवल लाल में प्रकाशित बिंब दिखाई देगा। परिणामस्वरूप, दोनों आंखें एक ही दृश्य के थोड़े से भिन्न दृश्य को देखती हैं। लेकिन, मस्तिष्क में दोनों बिंब संयुक्त होकर देखने वाले को 3-डी का आभास कराते हैं। चित्र 4 में रंगीन फिल्टर वाले चश्मे के साथ

चित्र 4: रंगीन संयुक्त चित्र

एक संयुक्त चित्र दिखाया गया है। हालांकि, रंगीन फिल्टर का प्रयोग करने से आप केवल श्वेत-श्याम चित्र देख सकते हैं। रंगीन 3-डी बिंब नहीं। ऐसा करने के लिए आपको ध्रुवण (पोलेराइज्ड) फिल्टर का प्रयोग करना होगा।

ध्रुवण प्रकाश की विशेषता होती है कि तरंगें केवल एक ही तल में कंपन करती हैं - वह तल जिसमें ये ध्रुवित होती हैं। ध्रुवण फिल्टर केवल तभी ध्रुवीय प्रकाश को गुजरने देता है जब कि गुजरने वाले प्रकाश का ध्रुवण तल इसके अपने ध्रुवण तल के समानांतर होता है। जब ध्रुवण तल इसके अपने ध्रुवण तल के लंबवत होता है तो यह पूरी तरह प्रकाश को रोक देता है। इसलिए अगर कुछ भिन्न परिदृश्य वाले दो बिंबों को, दोनों आंखों से जैसे दिखाई देते हैं, एक दूसरे के साथ लंबवत ध्रुवीय कोणों के साथ सैट एक प्रोजेक्टर पर लगे ध्रुवीय फिल्टरों का प्रयोग कर एक स्क्रीन पर प्रोजेक्ट किया जाता है, और संयुक्त बिंब को दोनों आंखों पर रखे दो लंबवत ध्रुवीय फिल्टरों के जरिए देखा जाता है तो प्रत्येक आंख केवल एक बिंब देखेगी। ध्रुवण फिल्टर केवल एक बिंब को ही देखने देंगे। यहां फिर से, मस्तिष्क दोनों बिंबों को मिला देगा और देखने वाला 3-डी बिंब का अनुभव करेगा। यहां एक विशेष स्क्रीन का प्रयोग किया जाता है जो आपाती प्रकाश का

विध्रुवण नहीं करती। चूंकि यहां रंगीन फिल्टरों का प्रयोग नहीं किया गया है इसलिए पूरी तरह रंगीन 3-डी बिंब देखे जा सकते हैं। विशालकाय स्क्रीन 3-डी (आइमैक्स) पर आप विशेष प्रकार के चश्मे पहन कर ऐसे बिंबों को देख सकते हैं। ये पारदर्शी कांच के चश्मे केवल लंबकोणीय ध्रुवण को ही गुजरने देते हैं।

एक अन्य युक्ति में जिसे 'शटर्ड ग्लास' कहते हैं, तरल क्रिस्टल डिस्प्ले का प्रयोग किया जाता है। इसे चश्मे की तरह पहना जाता है। आंख से पहले बिंब तरल क्रिस्टल डिस्प्ले पर तेजी से एक के बाद एक बनते है। 3-डी गहराई का आभास कराने के लिए ये बिंब हल्के से विस्थापित (डिस्प्लेस्ड) होते हैं। यदि इन बिंबों के प्रदर्शन की आवृत्ति काफी अधिक होती है तो उनकी झिलमिलाहट का पता नहीं चलता। आभासी वास्तविकता के लिए ऐसे ही 'शटर्ड ग्लास' का प्रयोग किया जाता है।

ऊपर बताई गई विधियों में विभिन्न प्रकार की पर्यवेक्षण तकनीकों का उपयोग करके कुछ भिन्न परिदृश्यों वाले 2-डी बिंबों को मिश्रित करके 3-डी प्रभाव उत्पन्न किया जाता है। दिए गए सभी उदाहरणों में, प्रत्येक आंख दृश्य का कुछ हल्का-सा भिन्न परिदृश्य देखती है और मस्तिष्क उन परिदृश्यों को मिश्रित कर देता है जैसा कि सामान्य 3-डी पर्यवेक्षण में होता है। हालांकि, इस प्रकार की 3-डी अनुभूति में आप अपना दृष्टिकोण नहीं बदल सकते अर्थात आप उसी दृश्य को भिन्न कोण से नहीं देख सकते क्योंकि यहां बिंब जड़ है।

होलोग्राफी

फोटोग्राफी में एक वस्तु का बिंब (3-डी दृश्य) एक इमेजिंग सिस्टम का प्रयोग करके एक फिल्म/डिटेक्टर (2-डी) पर बनाया जाता है। दृश्य को प्रदीप्त किया जाता है और बिखरी तरंगों को पकड़ कर और बिंब बनाने के लिए लैंस का प्रयोग करके इमेजिंग सिस्टम द्वारा मनिपुलेट किया जाता है। विभिन्न दिशाओं में बिखरी तरंगों को पकड़ कर वस्तु के विभिन्न परिदृश्यों को बिंबित किया जाता है। होलोग्राफी में किसी लैंस इमेजिंग सिस्टम का उपयोग नहीं किया जाता बल्कि बिखरी तरंगों की सीधे ही रिकॉर्डिंग की जाती है। एक तरंग की व्याख्या आयाम और प्रावस्था (फेज) के संदर्भ में की जा सकती है: आयाम वस्तु की चमक या प्रतिबिंबन से संबंधित हो सकता है और प्रावस्था किसी तथ्य के संदर्भ में गहराई से। सामान्य फोटोग्राफी में डिटेक्टर - फिल्म या सी सी डी डिटेक्टर - प्रकाश की ऊर्जा/तीव्रता के प्रति क्रिया कर सकते हैं। इसलिए प्रावस्था सूचना खो जाती है। प्रावस्था सूचना को व्यतिकरणमिति (इंटरफेरोमीट्री) द्वारा तीव्रता सूचना में बदला जा सकता है लेकिन उसके लिए समनुगत प्रदीप्ति की जरूरत होती है जैसा कि लेसर में होता है।

प्रदीप्ति के साधारण स्रोतों और लेसर में प्रमुख अंतर यह होता है कि प्रदीप्ति द्वारा उत्पन्न प्रकाश तरंगें प्रावस्था में नहीं होतीं। यह चलते हुए लोगों की भीड़ की तरह होती हैं जो एक ताल में नहीं हैं। लेकिन लेसर द्वारा उत्पन्न सभी प्रकाश तरंगों की प्रावस्था समान होती है। यह एक ताल में मार्च करते सिपाहियों की तरह होती हैं। जब एक 3-डी वस्तु को लेसर के प्रकाश से प्रदीप्त किया जाता है तो बिखरा हुआ प्रकाश प्रावस्था से बाहर चला जाता है। अब अगर उसी लेसर से एक बिना बिखरी समनुगत संदर्भ बीम को बिखरी तरंगों पर अध्यारोपित कर दिया जाए तो चमकदार फोटोग्राफी प्लेट डेवलपिंग तथा फिक्सिंग (प्रोसेसिंग) के बाद होलोग्राम कहलाती है। फोटोग्राफिक प्लेट बहुत उच्च विभेदन की होती है और अत्यंत सूक्ष्म व्यतिकरण धारियों को रिकॉर्ड करती है। चूंकि वस्तु पर एक बिंदु से बिखरा क्षेत्र फोटोग्राफिक प्लेट की पूरी सतह पर पड़ता है, इसकी पूरी सतह पर रिकॉर्डिंग होती है। होलोग्राम का कोई भी भाग या टूटा टुकड़ा पूरी वस्तु या दृश्य को प्रस्तुत कर सकता है जहां कि फोटोग्राफी में रिकॉर्डिंग अत्यंत स्थानीय हो जाती है।

जब होलोग्राम को संदर्भ तरंग से प्रदीप्त किया जाता है तो अनेक तरंगें पैदा होती हैं। उनमें से एक रिकॉर्ड की गई तरंग के समान होती है। अगर हम होलोग्राम के जरिए इस तरह से देखें की यह विसरित तरंग आंख में जाए तो वस्तु अपने पूरे प्रभाव के साथ दिखती है यद्यपि वह वहां होती नहीं है। दृश्य पुनर्रचित बीम के रंगों में दिखाई देता है। अगर हम होलोग्राम के विभिन्न भागों से देखें तो वस्तु के भिन्न परिदृश्य दिखाई देते हैं। अकसर होलोग्राम को स्मृति का गवाक्ष कहते हैं। चित्र 5 में होलोग्राम की रिकॉर्डिंग और होलोग्राम से दृश्य की पुनर्रचना दिखाई गई है।

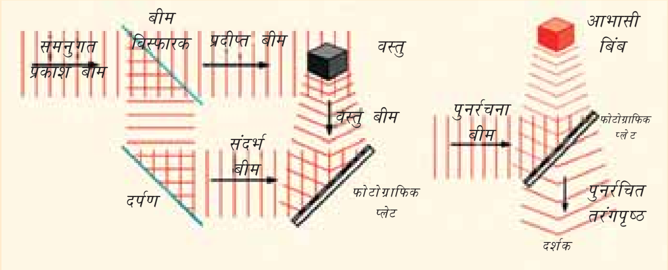

चित्र 5: होलोग्राम रिकॉर्डिंग (बाएं) और पुनर्रचना प्रक्रिया (दाएं)

होलोग्राम की रिकॉर्डिंग के लिए अनेक ज्यामितियां होती हैं। ये ज्यामितियां विशिष्ट लक्षणों वाले होलोग्राम बनाती हैं। कुछ होलोग्राम को सामान्य प्रदीप्ति में देखा जा सकता है (श्वेत प्रकाश प्रदीप्ति), और इसीलिए अंतराल में लटकी 3-डी वस्तुएं या दृश्य अत्यंत रोचक रूप में दिखाई देते हैं।

हमने ऊपर देखा कि होलोग्राफी के दो चरण होते हैं: (क) मनचाही वस्तु से तरंग की रिकॉर्डिंग, जो रिकॉर्डिंग चरण कहलाता है और (ख) पुनर्रचना चरण जिसमें वांछित बिंब उत्पन्न करने के लिए होलोग्राम प्रदीप्त होता है। रिकॉर्डिंग माध्यम एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है और विभिन्न प्रकार के होलोग्राम जैसे कि आयाम, प्रावस्था, परावर्तन, संचरण, सघन और विरल आदि बनते हैं। लेकिन लगभग सभी अनुप्रयोगों के लिए रिकॉर्डिंग माध्यम रैखिक ही माना जाता है। एक मजेदार बात यह है कि होलोग्राफी कंप्यूटर पर भी की जा सकती है और जो वस्तुएं भौतिक रूप से मौजूद नहीं हैं उनके होलोग्राम भी बनाए जा सकते हैं। बस उस वस्तु को गणितीय रूप से वर्णित किया जा सकता हो। अवास्तविक बिंब बनाने वाले होलोग्रामों को रिकॉर्ड करने के लिए कुछ ट्रिक्स का इस्तेमाल किया जा सकता है।

जाहिर है कि होलोग्राफी की खोज केवल रिकॉर्ड बनाने के लिए या 3-डी वस्तुओं या दृश्यों की पुनर्रचना के लिए नहीं हुई थी। होलोग्राफी के खोजकर्ता डेनिस गेबर को 1940 के दशक के आरंभ में इलैक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप का विभेदन बेहतर बनाने का काम दिया गया था जो लैंसों के निकृष्ट निष्पादन के कारण बहुत सीमित था। गेबर ने इमेजिंग प्रक्रिया का गहन अध्ययन किया और एक द्वि-चरणीय प्रक्रिया वाला हल निकाला। दुर्भाग्यवश इसे इलैक्ट्रॉन माइक्रोस्कोपी में प्रयोग नहीं किया जा सका अन्यथा इसके ढेरों अनुप्रयोग हैं, जिसने अनेक भौतिक क्रियाविधियों के हमारे ज्ञान को बढ़ाया है।

होलोग्राफी के अनुप्रयोग

हम होलोग्राफी के सभी या कई अनुप्रयोगों की बात न करके उनमें से कुछ का जिक्र करेंगे, विशेष रूप से जो 3-डी पर्यवेक्षण से संबंधित है। होलोग्राफी का प्रयोग एक जबरदस्त डिस्प्ले साधन के रूप में होता है। होलोग्राफी के म्यूजियम, एक्वेरियम, ड्राइंग रूम, डिस्प्ले विंडोज और प्रयोगशालाओं में अनेक अनुप्रयोग पाए गए हैं। कलाकारों का एक नया वर्ग बन गया है जो होलोग्राफी कलाकार या होलोग्राफर्स कहलाते हैं। वे अतुलनीय सुंदर और सारगर्भित होलोग्राम बना सकते हैं। असाधारण वस्तुएं जैसे काले अपारदर्शी घन में घड़ी बनाई जा सकती है जिसे देखा जा सकता है। दृश्य वस्तुएं वास्तविक होती हैं, अंतराल में लटकी होती हैं और कई बार बड़ी आकर्षक लगती हैं।

होलोग्राफी का एक अन्य प्रमुख अनुप्रयोग है सुरक्षा। अनेक पर्तों में और सुरक्षात्मक गुणों वाले बहुरंगी होलोग्राम बनाए जाते हैं। आप अक्सर ब्रेन्डेड उत्पादों पर इन्हें स्टिकर के रूप में देखते हैं। कुछ करेंसी नोटों पर भी ये सुरक्षा होलोग्राम लगाए जाते हैं।

होलोग्राम पर न तो खरोंच पड़ती है और न भेजने-बांटने में ये संदूषित होते हैं। ये डाटा संग्रह करने की बेहतर युक्तियां हैं और इन्हें जब चाहो चलाया और पढ़ा जा सकता है। पहले डाटा संग्रहित करने के लिए फॉरियर होलोग्राम का उपयोग किया जाता था - 100 मिमी × 100 मिमी के होलोग्राम पर 10,000 से भी अधिक पृष्ठ संग्रह किए जा सकते हैं। होलोग्राफिक सीडी संग्राहक बनाने पर अनुसंधान किए जा रहे हैं और अनुमान है कि एक होलोग्राफिक सीडी में 300 जीबी डाटा संग्रहित किया जा सकेगा।

होलोग्राफी के सबसे महत्वपूर्ण अनुप्रयोगों में से एक है होलोग्राम व्यतिकरण (इंटरफेरोमीट्री)। यह 1965 में अनेक लोगों द्वारा की गई एक आकस्मिक खोज थी। पहली बार वास्तविक चालू वस्तुओं पर होलोग्राफी करना संभव हुआ। बाहरी बलों के कारण वस्तुओं में होने वाले विरूपण को मापा गया। विभिन्न प्रकार के कंपित आयामों और प्रावस्थाओं को मापने के लिए कंपन अध्ययन किए जा रहे हैं। स्ट्रिंग और तालवाद्य दोनों प्रकार के संगीत उपकरणों पर अध्ययन किए जा रहे हैं। चित्र 6 में गिटार के कंपन पैटर्न को दिखाया गया है। वृहत् परास में विविधतापूर्ण सुग्राहकता होती है। वस्तुओं के अविनाशक परीक्षण किए जा रहे हैं। तकनीक से दोषयुक्त स्थान का पता चलता है क्योंकि दोनों को एकसाथ देखा जा सकता है। होलोग्राम व्यतिकरण के अनुप्रयोगों से उत्पादों की गुणवत्ता और विश्वसनीयता में सुधार हुआ है।

चित्र 6: गिटार का कंपन पैटर्न

प्रोफेसर आर एस सिरोही, कुलपति, बरकतउल्लाह विश्वविद्यालय, भोपाल तथा पूर्व निदेशक, इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी, दिल्ली। विज्ञान लोकप्रियकरण में भी उनकी रुचि है।

अनुवाद : विनीता सिंघल

(पृष्ठ 1 का शेष)

विज्ञान प्रसार समाचार

त्रिची (तमिलनाडु) में अभिप्रेरण कार्यशाला

कार्यशाला में ऐसी अनेक गतिविधियां प्रदर्शित की गईं जिनका उपयोग साइंस क्लबों में किया जा सकता है। क्लबों का गठन करने के बाद उन्हें विज्ञान प्रसार की 'विपनेट' योजना से संबद्ध कर दिया जाएगा। इस शृंखला की तीसरी कार्यशाला का आयोजन नवंबर 2006 में कोयंबटूर में किया जाएगा। आशा है इन कार्यशालाओं से प्रेरित होकर तमिलनाडु में लगभग 300 क्लबों का गठन हो सकेगा।

• • •

नवाचारी भौतिकी प्रयोग पर इन्टरैक्टिव सीडी

इस इन्टरैक्टिव सीडी का उद्देश्य कुछ अनूठी गतिविधियों की शृंखला को चित्रित एवं प्रदर्शित करके छात्रों एवं अध्यापकों में भौतिकी के प्रति रुचि बढ़ाना है।

हमें विश्वास है कि इसमें वर्णित अधिकांश प्रयोगों को कक्षा 8 से 12 तक के छात्र स्वयं कर सकेंगे। अधिकांश प्रयोगों को सामान्य रूप से उपलब्ध सामग्री की सहायता से किया जा सकता है।

सभी प्रयोग भौतिकी विभाग, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, कानपुर एवं विज्ञान प्रसार द्वारा संयुक्त रूप से विकसित किये गये हैं।

विषय सूची

- यांत्रिकी
- तरल पदार्थों के गुण
- ऊष्मा और ऊष्मागतिकी
- दोलन और तरंग
- विद्युत्
- धारा के चुंबकीय प्रभाव
- विद्युत् चुंबकीय प्रेरण
- प्रकाशिकी

सीडी के कुछ अन्य आकर्षण

- खोज
- साइट मैप
- मैनुअल
- वीडियो क्लिपिंग

मूल्य: 50 रुपए
डाक शुल्क: 20 रुपए

सीडी हिन्दी और अंग्रेजी भाषा में उपलब्ध हैं।

वि P V प्र **निदेशक, विज्ञान प्रसार,** ए–50, इंस्टीट्यूशनल एरिया, सेक्टर–62, नोएडा 201 307 (उत्तर प्रदेश) वेबसाइट: www.vigyanprasar.gov.in

सही खान-पान

आहार संबंधी कुछ हिदायतें

❑ डॉ. यतीश अग्रवाल
ई-मेल : dryatish@yahoo.com

आपका रसोई घर हो आपका औषधालय
और भोजन हो आपकी औषधि।
- हिप्पोक्रेटीज

पहली बार जब यह पता चले कि आप किसी असाध्य रोग से ग्रस्त हैं तो आप भय से कांप उठते हैं। आप सोचने लगते हैं "ऐसा नहीं हो सकता, अब न जाने कितनी 'ऐसा करो', 'ऐसा न करो' की बंदिशों के साथ जीना होगा।" शायद आपके मन में ढेरों सवाल उठेंगे कि आपको क्या खाना चाहिए और क्या नहीं। कुछ लोगों का यह सोच कर दिल बैठ जाएगा कि शायद वे अब अपनी रुचि का भोजन नहीं कर पाएंगे!

यदि आपको भी ऐसा ही लग रहा है तो यहां भोजन संबंधी कुछ तथ्य दिए जा रहे हैं जिन्हें आप अपने भविष्य के उपयोग के लिए गांठ बांध सकते हैं।

अल्प सोडियम (लवण) आहार

उच्च रक्तदाब, दुर्बल हृदय, लंबे समय से गुर्दों के ठीक काम न करने या शरीर में पानी भर जाने पर आहार में लवण की मात्रा कम करने की आवश्यकता होती है। ऐसा करने पर रक्तदाब तथा शरीर में जलसंचय की प्रवृत्ति में कमी आती है। लवण की मात्रा सीमित करने से हृदय भी अधिक सुचारू रूप से काम कर पाता है। इस लिहाज से संसाधित खाद्य पदार्थ सबसे अधिक गुनाहगार हैं। नमकीन स्नैक्स, सुलभ भोजन सामग्री, अचार, सॉस आदि में नमक की मात्रा खासतौर पर अधिक होती है। यदि आप आहार में लवण की मात्रा नियंत्रित रखना चाहें तो निम्न पदार्थों का या तो कम सेवन करें अथवा इनका सर्वथा परित्याग कर दें।

- खाने का नमक (टेबल सॉल्ट)
- अचार, ऑलिव्स
- चटनियां
- सॉस, खासतौर पर सोया, सरसों और टमाटर का सॉस
- नमकीन, भुजिया, दालमोठ, मठरी
- चाट, पकौड़ी, फ्रेंच फ्राई, फॉस्ट फूड
- पॉपकॉर्न और आलू के चिप्स
- गाय का दूध
- संसाधित पनीर
- नमकीन मक्खन और मूंगफली का मक्खन
- नमकीन क्रैकर्स और बिस्कुट
- पेस्ट्री, केक, आइसक्रीम
- नमकीन गिरियां
- डिब्बाबंद भोजन (फलों को छोड़कर)
- चौलाई, लीची, तरबूज
- संसाधित गोश्त
- सॉस, हैम, बेकन
- समुद्री मछली
- बाजार में मिलने वाला तैयार सलाद
- तुरत-फुरत पकाए गए अनाज
- बर्फ में संरक्षित खाद्य पदार्थ
- प्रति-अम्ल (एंटासिड) दवाईयां

हृद्-धमनी संबंधी रोगों से बचाव हेतु आहार

शरीर में सीरम कॉलेस्ट्रॉल का स्तर कम रहने से हमारी धमनियों में रुधिर परिसंचरण सुचारू रूप से चलता रहता है। उस दृष्टि से आहार महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। स्वास्थ्यवर्द्धक आहार धमनी संबंधी रोगों को लगभग एक चौथाई कम कर सकता है।

फल और सब्जियां

- ताजे फल और सब्जियां खूब खाइए। यदि फल का छिलका खाने योग्य हो तो उसे बर्बाद न करें।
- आलू, शकरकंदी और चुकंदर सीमित मात्रा में लें।

अनाज

- चोकर सहित आटा, चोकर युक्त आटे की डबलरोटी, साबुत अनाज, जई, बिना पॉलिश किया चावल, फलियां और अंकुरित चना भोजन में शामिल करें।
- मैदे से बनी वस्तुएं जैसे डबलरोटी, नान और कुल्चों से परहेज करें।

दुग्ध उत्पाद

- वसारहित दूध, अल्प वसा पनीर, दही और छाछ का प्रयोग करें।
- संपूर्ण वसायुक्त दूध, कंडेंस्ड दूध, क्रीम और वसायुक्त पनीर का परित्याग करें।

अंडे और गोश्त

- 200 ग्राम तक गोश्त भोजन में लिया जा सकता है। अच्छा रहेगा यदि गोश्त खरगोश या मुर्गे का हो।
- नियंत्रित मात्रा में जिगर, गुर्दे आदि चर्बी रहित मांस भी लिया सकता है।
- सप्ताह में दो से अधिक अंडे न लें।
- गोश्त, पोर्क, बत्तख के मांस, तले मांस के व्यंजनों, सॉसेज़ और बर्गर में चिकनाई से परहेज़ करें।

मछली

- श्वेत मछली (कॉड, बांगड़ा, सामन) भोजन में शामिल करें। चर्बी सहित मछली 200 से 400 ग्राम प्रति सप्ताह लेना उत्तम भोजन है।
- तली हुई मछली से परहेज करें।

वसा तथा तेल

- वसा व तेल का कम से कम उपयोग करें। भोजन तैयार करने में प्रयुक्त वसा का उपयोग 20 ग्राम तक सीमित रखें।

- जैतून, करडी, सूरजमुखी, तिल, बिनौले, मक्का और मूंगफली का तेल संतुलित मात्रा में लें।
- भारी वसा से बचें जैसे वनस्पति, मक्खन, घी, पाम ऑयल, नारियल का तेल, मार्जरीन और लार्ड।

केक और मिष्ठान

- कम वसा वाली पुडिंग, खीर और जलेबी खा सकते हैं।
- केक और मिष्ठान पर लगाम लगाएं।
- खोये की मिठाइयां, डेरी आइसक्रीम और चॉकलेट से परहेज़ करें।

नमक

- कम से कम उपयोग करें।

मधुमेह के रोगी का आहार

सामान्य धारणा के विपरीत, मधुमेह अर्थात डाएबिटीज होने का यह अर्थ नहीं है कि आपको एक लंबी-चौड़ी आहार तालिका का पालन करना पड़ेगा। अधिकांश लोगों के लिए मधुमेह रोग होने का सीधा मतलब है भोजन में विविधता और सुधार की जरूरत। कुछ खाद्य पदार्थों का अधिक सेवन किया जाना चाहिए, जैसे दालें, फलियां, फल और सब्जियां, जिनमें पोषक तत्व अधिक होते हैं मगर वसा और कैलोरी कम होती है। इसी प्रकार कुछ अन्य खाद्य पदार्थ मधुमेह रोगी को कम लेने चाहिए जैसे मिठाई, जंक फूड, डिब्बाबंद खाद्य पदार्थ तथा मांसाहार। भोजन संबंधी अनुशासन भी

जरूरी है। ज्यादा अच्छा यह होगा कि आप रोज एक नियत समय पर भोजन की नियत मात्रा लें जिसमें कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन और वसा निश्चित अनुपात में हो। इससे आपके रक्त में शर्करा नियंत्रित रहेगी।

एक दिन भारी भोजन करने और दूसरे दिन कम मात्रा में करने से रक्त में शर्करा पर नियंत्रण रखना कठिन हो जाता है। इसी तरह यदि आप एक समय में अधिक भोजन करें तब भी आपके रक्त में शर्करा बढ़ जाएगी। बीच में चार या पांच घंटे का नियत अंतराल रखकर भोजन करने से रक्त की शर्करा में बड़े उतार-चढ़ाव को कम किया जा सकता है और इससे भोजन का पाचन भी ठीक होता है।

मधुमेह रोगियों को उन सभी प्रकार के खाद्य पदार्थों से बचना चाहिए जिनसे केवल कैलोरी मिलती है और अन्य किसी प्रकार के पोषक तत्व प्राप्त नहीं होते। इस सूची में शामिल खाद्य पदार्थ इस प्रकार हैं :

- चीनी
- ग्लूकोज
- जैम, मार्मलेड, चासनी, शीरा
- शहद
- डिब्बाबंद फल
- मिठाइयां
- चाकलेट
- नींबू शर्बत, ग्लूकोज शर्बत
- चीनी मिले दुग्ध उत्पाद तथा ऐसे ही अन्य खाद्य पदार्थ
- केक, मीठे बिस्किट, चाकलेट बिस्किट, कचौड़ी, पुडिंग, गाढ़ा सॉस
- ऐल्कोहली पेय

गाउट के रोगी और प्यूरिन की कम मात्रा वाला आहार

जो लोग गाउट, यूरिक अम्ल, मूत्र प्रणाली की पथरी या हाइपरयूरिसीमिया के रोगी हों, उनहें प्यूरिन की कम मात्रा वाला आहार लेना चाहिए। इससे रक्त में यूरिक अम्ल की मात्रा 10 प्रतिशत तक घटाई जा सकती है।

- पालक, फूलगोभी, मटर तथा सेम
- मशरूम
- साबुत दालें
- चना, राजमा, लोबिया
- मसूर की दाल
- भीतरी अंगों का मांस : कलेजी, गुर्दे, अग्न्याशय, कीमा, चिकन, सुअर का मांस, सॉसेज
- सार्डीन, झींगी, मेकरल आदि समुद्री मछलियां
- एल्कोहली पेय
- चाय, कॉफी तथा कोला पेय

नीचे दिए गए खाद्य पदार्थों से सीरम यूरिक अम्ल की मात्रा बढ़ सकती है। इसलिए इनका परहेज करें। साथ ही परामर्श दिया जाता है कि कम कैलोरी तथा वसा की कम मात्रा वाला आहार लें और अपना वजन घटाएं। अधिक वजन या मोटापे से यूरिक अम्ल की मात्रा बढ़ जाती है। इसके साथ ही शरीर में पानी की कमी न रहे। इसलिए खूब पानी पिएं, मतलब दिन भर में दस-बारह गिलास पानी। यह आपके शरीर से यूरिक अम्ल बाहर निकालने में मदद करता है।

अधिक रेशे वाला आहार

अधिक रेशे वाला आहार करने के अनेक लाभ हैं। इससे कब्ज की शिकायत दूर होती है, इरिटेबल बोवेल में आराम मिलता है, डायवर्टिकुलोसिस (बड़ी आंत की दीवाल में कई छोटी-छोटी थैलियां-सी निकल आती हैं) तथा बड़ी आंत के कैंसर का खतरा कम होता है, कोलेस्टेरॉल का स्तर घटता है, रक्त में शर्करा के नियंत्रण में सुधार होता है और हृदय रोग का खतरा कम होता है। हां, अपने दैनिक आहार में आपको फल-सब्जियों की मात्रा बढ़ानी पड़ेगी। वह भी जहां तक संभव हो सके छिलके के साथ खाइए। बाजार में मिलने वाले प्रॉसेस्ड भोजन से दूर ही रहें। आप चाहें तो निम्न खाद्य पदार्थ खा सकते हैं क्योंकि इनमें रेशे की मात्रा अच्छी या अधिक पायी जाती है।

अत्यधिक रेशे वाला भोजन

- मटर तथा लोबिया
- ईसबगोल
- गेहूं का चोकर, कॉर्न फ्लेक
- बादाम
- सूखी खूबानी, सूखे आलूचा तथा अंजीर

अधिक रेशे वाला भोजन

- पालक तथा बेक की हुई बीन
- चोकर मिला आटा/चोकर सहित गेहूं के आटे की रोटी
- रसभरी, काले किशमिश, ब्लैक बेरी

मध्यम रेशे वाला भोजन

- फ्रैंचबीन, गाजर, पत्तागोभी, चुकंदर तथा स्वीट कॉर्न
- मसूर, अंकुरित अनाज
- सेब, केला, नाशपाती, प्लम तथा स्ट्रॉबेरी
- अखरोट

अनुवाद : कुंकुम जोशी

भूकंप टिप - 5

ढांचों पर भूकंपी प्रभाव क्या होते हैं?

ढांचों में जड़त्व बल

भूकंप के कारण जमीन हिल उठती है। इसलिए जमीन पर खड़ी इमारत अपने आधार पर गति का अनुभव करेगी। न्यूटन के गति के पहले नियम के अनुसार, हालांकि भवन का आधार भूमि के साथ हिलने लगता है, पर छत की यह प्रवृत्ति होती है कि वह अपने मूल स्थान पर ही बनी रहे। लेकिन, चूंकि दीवारें और स्तंभ छत से जुड़े होते हैं, वे अपने साथ-साथ छत को भी खींचते हैं। इसकी तुलना काफी कुछ उस स्थिति से की जा सकती है जब वह बस जिस पर आप खड़े होते हैं अचानक चल पड़ती है। आपके पांव तो बस के साथ गतिमान होते हैं, लेकिन आपके शरीर के ऊपरी भाग की यह प्रवृत्ति रहती है कि वह अपनी पहली वाली स्थिति में ही रहे। इस कारण आप पीछे की ओर झटका महसूस करते हैं! पहले वाली स्थिति में ही बने रहने की इस प्रवृत्ति को जड़त्व (इनर्शिया) कहते हैं। चूंकि किसी इमारत में दीवारें या स्तंभ लचीलापन लिए होते हैं, इसलिए छत की गति, भूमि की गति से भिन्न होती है (चित्र 1)।

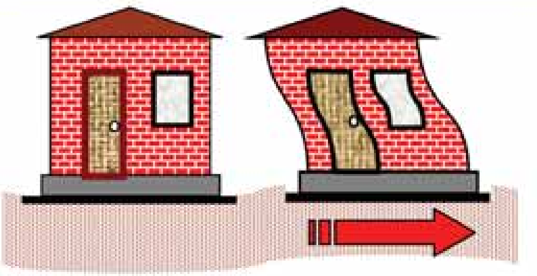
चित्र 1 : आधार पर प्रकंपित किए जाने पर किसी इमारत में जड़त्व का प्रभाव

एक इमारत की कल्पना कीजिए, जिसकी छत स्तंभों पर टिकी हुई हो (चित्र 2)। आपके बस में सवार होने के उदाहरण पर एक बार फिर से विचार करते हैं : जब अचानक बस चल पड़ती है, तब आप पीछे की ओर झटके से गिर पड़ते हैं, मानो किसी ने आपके शरीर के ऊपरी हिस्से पर बल का प्रयोग किया हो। जब धरती हिलने लगती है, वह इमारत भी उसी तरह पीछे की ओर गिरती है और छत एक बल का अनुभव करती है जिसे जड़त्व बल कहते हैं। यदि उस छत का द्रव्यमान एम (M) है और वह त्वरण ए (a) का अनुभव करती है तो न्यूटन की गति के दूसरे नियम के अनुसार, जड़त्व बल एफ (F_I) त्वरण ए (a) और द्रव्यमान एम (M) का गुणनफल होता है और उसकी दिशा, त्वरण की दिशा के विपरीत होती है। स्पष्ट है कि अधिक द्रव्यमान का अर्थ अधिक जड़त्व बल का होना है। इसलिए हल्की इमारतें भूकंप के झटकों को बेहतर ढंग से सहती हैं।

ढांचों पर विरूपणों का प्रभाव

छत द्वारा अनुभव किया गया जड़त्व बल स्तंभों के माध्यम से भूमि को स्थानांतरित कर दिया जाता है, जिससे स्तंभों में बलों का सृजन होता है। स्तंभों में सृजित इन बलों को एक दूसरे ढंग से भी समझा जा सकता है। भूकंप के झटकों के दौरान, ये स्तंभ अपने सिरों के बीच आपेक्षिक गति का अनुभव करते हैं। चित्र 2 में छत और जमीन के बीच की इस गति को राशि यू (u) से दर्शाया गया है। लेकिन, यदि स्तंभों का वश चले तो वे उसी सीधी खड़ी या उर्ध्वाधर स्थिति में ही वापस आना पसंद करेंगे, यानी स्तंभ विरूपणों के विरुद्ध प्रतिरोधिता दिखाते हैं। सीधी उर्ध्वाधर स्थिति में स्तंभ किसी क्षैतिज भूकंपी बल को अपने अंदर वहन नहीं करते हैं लेकिन

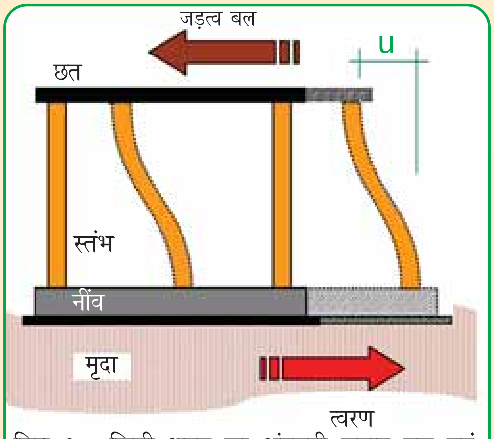

चित्र 2 : किसी भवन का अंदरूनी जड़त्व बल एवं आपेक्षिक गति

बलपूर्वक मोड़े जाने पर उनमें आंतरिक बलों की उत्पत्ति होती है। स्तंभ के ऊपरी और निचले हिस्से के बीच आपेक्षिक क्षैतिज विस्थापन यू (u) का मान जितना अधिक होगा, स्तंभों में उत्पन्न यह आंतरिक बल भी उतना ही अधिक होगा। स्तंभ जितने अधिक दृढ़ या सख्त होंगे (यानी स्तंभ का आकार जितना बड़ा होगा), यह बल भी उतना ही विशाल होगा। इसी कारण स्तंभों में उत्पन्न इन आंतरिक बलों को दुर्नम्यता (स्टिफनेस) बल कहते हैं। दरअसल, किसी स्तंभ में पैदा हुआ दुर्नम्यता बल, स्तंभ दुर्नम्यता और उसके सिरों के बीच के आपेक्षिक विस्थापन के गुणनफल के बराबर होता है।

क्षैतिज एवं ऊर्ध्वाधर प्रकंपन

भूकंप के कारण तीनों दिशाओं - दो क्षैतिज दिशाओं जिन्हें एक्स (x) और वाई (y) मान लें तथा एक ऊर्ध्वाधर दिशा (जिसे ज़ेड (z) मान लें)

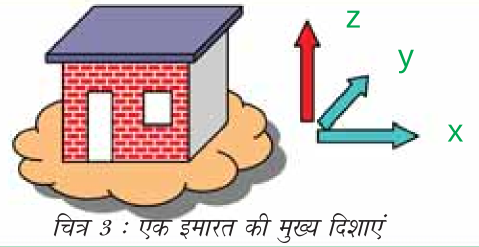

चित्र 3 : एक इमारत की मुख्य दिशाएं

(चित्र 3) में जमीन हिल उठती है। भूकंप के दौरान, जमीन यादृच्छिक रूप से सभी एक्स (x), वाई (y) और ज़ेड (z) दिशाओं में पीछे और आगे की

ओर (- और +) डोलने लगती है। इमारतों के सभी ढांचे मुख्य रूप से गुरुत्वीय भारों को उठाने के हिसाब से बनाए जाते हैं यानी वे द्रव्यमान एम (M) (जिसमें स्व भार व आरोपित भारों के कारण द्रव्यमान शामिल होता है) और ऊर्ध्वाधर अधोमुखी दिशा '-ज़ेड' (-z) में कार्यरत गुरुत्वीय त्वरण के गुणनफल से प्राप्त होने वाले बल के हिसाब से बनाए जाते हैं। इस अधोमुखी बल एमजी (Mg) को *गुरुत्वीय भार* कहते हैं। जमीन के हिलने के दौरान ऊर्ध्वाधर त्वरण को या तो गुरुत्वीय त्वरण में जोड़ा जाता है या फिर इससे घटाया जाता है। चूंकि संरचनाओं की डिजायन में गुरुत्व भारों का प्रतिरोध करने के लिए सुरक्षा कारकों का ध्यान रखा जाता है, इसलिए ऊर्ध्वाधर प्रकंपनों को अधिकतर ढांचे अक्सर सह लेते हैं।

लेकिन एक्स (X) तथा वाई (Y) दिशाओं में क्षैतिज प्रकंपन (दोनों के ही + तथा - दिशाओं में) चिंता का विषय हैं। सामान्यतया गुरुत्वीय भारों के लिए डिजायन की गई संरचनाएं भूकंप के क्षैतिज प्रकंपनों को सुरक्षित रूप से झेल पाने में सक्षम नहीं होती हैं। अतः क्षैतिज भूकंपी प्रभावों के विरुद्ध संरचनाओं की मजबूती को सुनिश्चित करना आवश्यक होता है।

नींवों तक जड़त्वीय बलों का पहुंचना

धरती के क्षैतिज प्रकंपन के अंतर्गत, संरचना की संहति (जो सामान्यतया फर्श के स्तरों पर स्थित होती है) के स्तर पर क्षैतिज जड़त्वीय बलों का सृजन होता है। ये पार्श्वीय जड़त्वीय बल फर्श-स्लैब द्वारा दीवारों या कॉलमों तक, नींवों तक और अंततः नीचे मृदा तंत्र (चित्र 4) पर स्थानांतरित कर दिए जाते हैं। अतः इन सभी संरचनात्मक घटकों (फर्श-स्लैब, दीवारें, कॉलम और नींवें) और इनके बीच के संयोजनों को इन जड़त्वीय बलों को अपने में से होकर सुरक्षित रूप से गुजार पाने हेतु डिजायन किया जाना आवश्यक है।

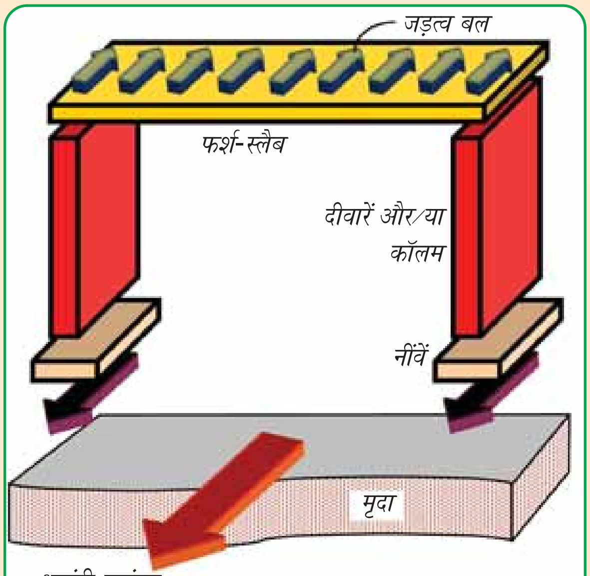

चित्र 4 : सभी संरचनात्मक घटकों से होकर भूकंपी जड़त्वीय बलों का गुजरना

जड़त्वीय बलों के स्थानांतरण में दीवारें और कॉलम बहुत अहम् होते हैं। लेकिन, पारंपरिक निर्माण कार्य में डिजायन तथा निर्माण के दौरान दीवारों और कॉलमों की तुलना में फर्श-स्लैबों और बीमों पर अधिक ध्यान देने के साथ-साथ अधिक सावधानी से भी काम लिया जाता है। दीवारें आपेक्षिक रूप से पतली और अक्सर चिनाई के भंगुर पदार्थ से निर्मित होती हैं। भूकंप के क्षैतिज जड़त्वीय बलों को अपनी मोटाई की दिशा में झेलते हुए ले जाने में वे कमजोर पड़ जाती हैं। चिनाई की दीवारों की नाकामी विगत में आए अनेक भूकंपों में देखी जा चुकी है। (उदाहरण के लिए, चित्र 5 क)। उसी तरह, खराब ढंग से डिजायन की गई और निर्मित प्रबलित कंक्रीट के कॉलम खतरनाक हो सकते हैं। निचली मंजिल के कॉलमों की कमजोरी के कारण ही सन् 2001 में भुज (भारत) में आए भूकंप के दौरान अनगिनत भवन ध्वस्त हो गए थे (चित्र 5 ख)।

क) सन् 1991 में उत्तरकाशी (भारत) में आए भूकंप के दौरान पत्थर की चिनाई वाली दीवारों का आंशिक रूप से ध्वस्त होना

ख) सन् 2001 में भुज (भारत) में आए भूकंप के दौरान प्रबलित कंक्रीट वाले कॉलमों (और भवनों) का ध्वस्त होना

चित्र 5 : क्षैतिज भूकंपी बलों के लिए दीवारों/कॉलमों के डिजायन का महत्व

सदंर्भ सामग्री

1. चोपड़ा, ए.के. (1980), डायनामिक्स ऑफ स्ट्रक्चर्स-ए प्राइमर, ईईआरआई मोनोग्राफ, भूकंप इंजीनियरी अनुसंधान संस्थान, संयुक्त राज्य अमेरिका।

साभार :

लेखक : सी.व्ही. आर. मूर्ति, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर, कानपुर

प्रायोजक : भवन निर्माण सामग्री एवं प्रौद्योगिकी संवर्धन परिषद, नई दिल्ली

अनुवादक : आभास मुखर्जी **अनुवाद समीक्षक** : स्निग्धा ए. सान्याल

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की अभिनव उपलब्धियां
नोबेल पुरस्कार 2006

भौतिक विज्ञान

वर्ष 2006 का भौतिकी का नोबेल पुरस्कार संयुक्त रूप से दो अमेरिकी खगोल भौतिकीविदों को प्रदान किया गया है। ये हैं : नासा गोडार्ड स्पेस फ्लाइट सेंटर, ग्रीनबेल्ट, मेरीलैंड के जॉन सी. माथेर और लारेंस बर्कले नेशनल लैबोरेट्री, बर्कले कैलिफोर्निया के जॉर्ज एफ. स्मूट। यह पुरस्कार उन्हें ''कॉस्मिक माइक्रोवेव बैकग्राउंड रेडिएशन के ब्लैक बाडी रूप तथा विषमदैशिकता (एनिसोट्रॉपी) की

जॉन सी माथेर

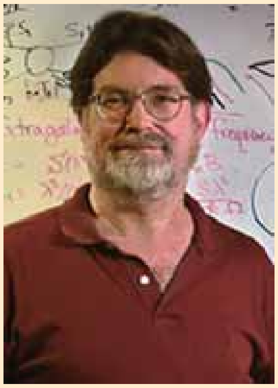

जॉर्ज एफ. स्मूट

खोज के लिए'' प्रदान किया गया है। ये दोनों विज्ञानी नासा की उपग्रह वेधशाला 'कोबे' (कॉस्मिक बैकग्राउंड एक्सप्लोरर) के चीफ आर्किटेक्ट रहे हैं। यह अंतरिक्ष यान 1989 में छोड़ा गया और इसने 'महाविस्फोट' के करीब 3,80,000 वर्ष बाद ब्रह्मांड के जन्म के समय पैदा हुए प्रकाश के क्षीण अवशेषों को मापा। तब तक ब्रह्मांड प्रकाश के लिए अपारदर्शी था जिसके कारण उससे पूर्व की किसी भी चीज को सीधे देखना असंभव था। कोबे से प्राप्त आंकड़ों से ब्रह्मांड के जन्म संबंधी 'महा विस्फोट' की परिकल्पना की पुष्टि हुई। माथेर तथा स्मूट की खोज से तारों, मंदाकिनियों तथा अन्य खगोलीय पिंडों के प्राचीन 'बीजों' का पता लगा और आधुनिक ब्रह्मांडिकी को एक सुस्पष्ट विज्ञान की शाखा का रूप देने में इसकी महत्वपूर्ण योगदान है।

रसायन विज्ञान

रसायन विज्ञान का वर्ष 2006 का नोबेल पुरस्कार स्टेनफोर्ड यूनिवर्सिटी, कैलिफोर्निया के अमेरिकी जैव रसायनविज्ञानी रोजर डी. कॉर्नबर्ग को यूकेरियोटिक ट्रांसक्रिप्सन के आणविक आधार संबंधी उनके अध्ययनों के लिए प्रदान किया गया है। रोजर नोबेल पुरस्कार विजेता आर्थर कॉर्नबर्ग के सुपुत्र हैं जिन्हें डीएनए के एक अणु से दूसरे अणु में आनुवंशिक सूचना के स्थानांतरण संबंधी उनके अध्ययनों के लिए 1959 के शरीर क्रिया विज्ञान या चिकित्सा विज्ञान के नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। आर्थर कॉर्नबर्ग ने यह पता लगाया था कि मूल या मातृ कोशिका से इसकी संतति कोशिकाओं तक आनुवंशिक सूचना कैसे पहुंच जाती है। अब उनके बेटे ने पता लगाया है कि किस प्रकार डीएनए से मैसेंजर-आरएनए में आनुवंशिक सूचना की प्रतिलिपि तैयार कर ली जाती हे। मैसेंजर - आरएनए यह सूचना कोशिका के केंद्रक से बाहर लाता है ताकि उसके आधार पर प्रोटीनों का निर्माण किया जा सके। रोजर कॉर्नबर्ग ने ऐसी विस्तृत क्रिस्टल संरचनात्मक तस्वीरें तैयार करने में सफलता प्राप्त की है जिससे यूकेरियोटिक कोशिका में ट्रांसक्रिप्सन का कार्य स्पष्ट दिखाई देता है। इससे ट्रांसक्रिप्सन प्रक्रिया को साफ-साफ देखना संभव हो गया है।

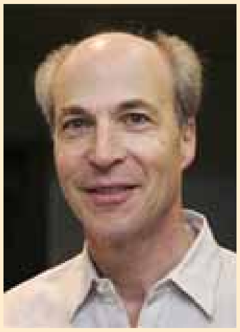

रोजर डी कॉर्नबर्ग

शरीर क्रिया विज्ञान या चिकित्सा विज्ञान

वर्ष 2006 का शरीर क्रिया विज्ञान या चिकित्सा विज्ञान का नोबेल पुरस्कार दो अमेरिकी वैज्ञानिकों को संयुक्त रूप से प्रदान किया गया है। ये वैज्ञानिक हैं : स्टैनफोर्ड यूनिवर्सिटी स्कूल ऑफ मेडिसिन, कैलिफोर्निया के एंड्रयू ज़ेड फायर तथा यूनिवर्सिटी ऑफ मैसाच्युसेट्स मेडिकल स्कूल, वॉर्सेस्टर, मैसाच्युसेट्स के क्रेग सी. मैलो। उन्हें यह पुरस्कार उनकी ''आरएनए व्यतिकरण (इंटरफेरेंस) - द्विलड़ी (डबल स्ट्रेंडेड) आरएनए द्वारा जीन साइलेंसिंग'' खोज के लिए प्रदान किया गया है। फायर तथा मैलो ने 1998 में उस प्रणाली की खोज की जिसके तहत मैसेंजर - आरएनए का किसी विशेष जीन से अवकर्षण यानी डीग्रेडेशन हो जाता है। यह प्रणाली 'आरएनए इंटरफेरेंस' कहलाती है और कोशिका में दुहरी-लड़ियों वाले आरएनए अणु होने पर सक्रिय हो जाती है।

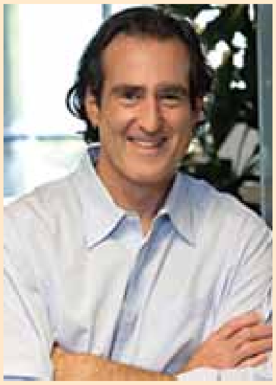

क्रैग सी. मैलो

एंड्रयू ज़ेड फायर

दुहरी-लड़ियों वाले आरएनए से जैव रासायनिक प्रक्रिया सक्रिय हो जाती है जिसके कारण उन मैसेंजर - आरएनए अणुओं का अवकर्षण हो जाता है जिनमें दुहरी-लड़ियों वाले आरएनए के समान आनुवंशिक सूचना होती है। जब ऐसे मैसेंजर - आरएनए अणु गायब हो जाते हैं तो संबंधित जीन के प्रभाव को दबा दिया जाता है और सूचना-निर्देश के अनुसार प्रोटीन का निर्माण नहीं किया जाता। इस प्रकार का आरएनए व्यतिकरण पौधों, प्राणियों तथा मनुष्यों में होता है। जीन का प्रभाव प्रकट होने की प्रक्रिया में इसका बहुत बड़ा महत्व है। विषाणुजनित संक्रमणों में भी इसका हाथ होता है और इस प्रणाली से इधर-उधर प्रभाव प्रकट करने वाले 'जंपिंग जीन' भी नियंत्रण में रहते हैं।

आकाश दर्शन - अक्टूबर 2006

पूर्ण चांद (पूर्णिमा)

05 नवंबर

चांद - अंतिम क्वार्टर

13 नवंबर

उत्तर

पूर्व

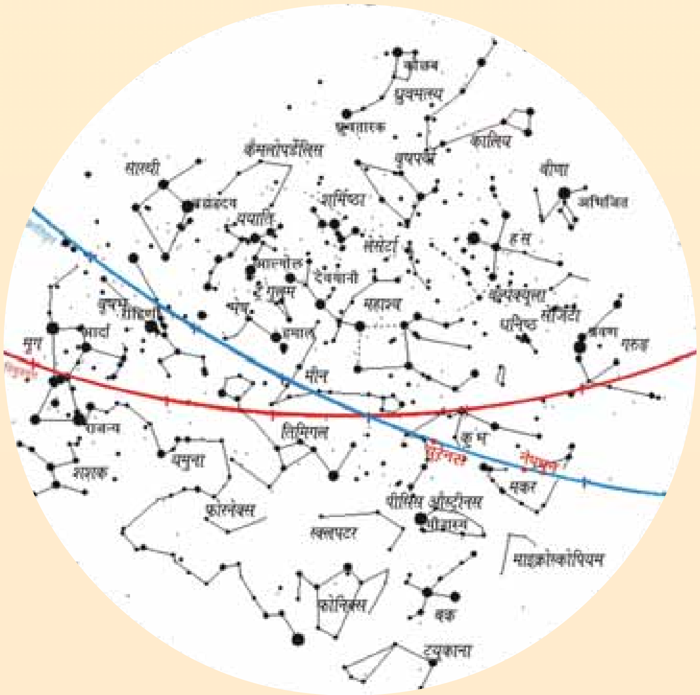

पश्चिम

दक्षिण

नया चांद (अमावस्या)

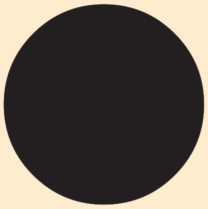

20 नवंबर

चांद - पहला क्वार्टर

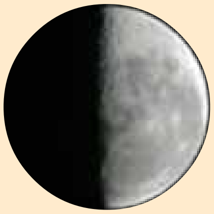

27 नवम्बर

आकाश की यह स्थिति नागपुर (21.09^0 उत्तर, 79.09^0 पूर्व) के दर्शकों के लिए बताई गई है। इसमें चमकीले नक्षत्रों और ग्रहों को दिखाया गया है। नागपुर के दक्षिण में रहने वाले दर्शकों को दक्षिणी नक्षत्रों दक्षिणी आकाश में काफी ऊंचाई पर जबकि उत्तरी नक्षत्रों उत्तरी आकाश के क्षितिज के समानांतर दिखाई देंगे। जबकि नागपुर के उत्तर में रहने वाले दर्शकों को उत्तरी नक्षत्रों उत्तरी आकाश में काफी ऊंचाई पर जबकि दक्षिणी नक्षत्रों दक्षिणी आकाश के क्षैतिज के समानांतर दिखाई देंगे। इस मानचित्र को 1 नवंबर रात दस बजे और 15 नवंबर रात्रि 9 बजे और 31 नवंबर को रात्रि 8 बजे इस्तेमाल किया जा सकता है।

रात में आकाश को निहारने के लिए निम्न बातों का ध्यान रखें :

(1) शहर की रोशिनियां/गली की रोशिनियों से दूर का कोई स्थान चुनें; (2) आकाश के चित्र को सिर के ऊपर ध्रुव तारे की दिशा यानी 'उत्तर' में पकड़कर रखें; (3) चित्र को पढ़ने के लिए पेंसिल , टॉर्च का उपयोग करें; (4) चित्र में दिखाई गई राशियों को एक-एक कर पहचानें।

सौर मंडल में ग्रह तथा बौने ग्रह

बृहस्पति : पश्चिमी क्षितिज पर तुला राशि में।

यूरेनस, नेप्च्यून तथा प्लूटो : इन्हें कोरी आंख से देखना संभव नहीं है।

स्थाई तारामंडल : नीचे प्रमुख तारामंडलों का उल्लेख किया गया है। उनमें सबसे अधिक चमकदार तारे का नाम कोष्टक में दिया गया है। इटैलिक अक्षरों में उनके भारतीय नाम दिए गए हैं।

पूर्वी आकाश : ऑरिगा (कैपिला)/*सारथी (ब्रह्महृदय),* इरिडेनस/*यमुना,* लेपस/*शशक,* ओरायन (बेटलग्यूज)/मृग *(आर्द्रा),* टॉरस/*वृषभ राशि।*

पश्चिमी आकाश : एक्विला (अल्टेयर)/गरुड़ *(श्रवण),* कैप्रिकोर्नस/*मकर राशि,* सिग्नस (डेनेब)/*हंस,* लायरा (वेगा)/ स्वरमंडल *(अभिजित)।*

दक्षिणी आकाश : ग्रुस/*बक,* फोनिक्स, पाइसिस आस्ट्रियुनस, टुकाना।

उत्तरी आकाश : ड्रैको/*कालिय,* कैसियोपिया/*शर्मिष्ठा,* सेफियस/*वृषपर्व,* उर्सा माइनर (पोलेरिस)/*ध्रुवमत्स्य* (ध्रुव तारक)।

शिरोबिन्दु : एंड्रोमीडा/देवयानी, एरीज (हमाल)/मेष राशि, एक्वेरियस/*कुंभ राशि,* सेतस (डेनेब, काटोस)/*तिमिंगल,* पैगासस/*महाश्व,* पर्सेयस (मिरफ़ाक, अलगोल)/*ययाति, मीन*/मीन राशि।

अरविन्द सी. रानडे
ई-मेल : rac@vigyanprasar.gov.in